वर्ष : 18 • अंक : 10 • पृष्ठ : 44 • जयपुर
www.shaikshikmanthan.com

शैक्षिक मंथन संस्थान
आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

ISSN 2581- 4133
प्र. ज्येष्ठ, विक्रम संवत् 2083
1 मई 2026 • ₹ 30/-

शैक्षिक मंथन

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 18 अंक : 10 1 मई 2026

प्र. ज्येष्ठ, विक्रम संवत् 2083

परामर्श

डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल

प्रो. नारायण लाल गुप्ता

प्रो. गीता भट्ट

शिवानन्द सिन्दनकेरा

जी. लक्ष्मण

महेन्द्र कुमार

❖

सम्पादक

प्रो. शिवशरण कौशिक

❖

संपादक मंडल

प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय

प्रो. राजेश कुमार जांगिड़

प्रो. अनिल कुमार दाधीच

भरत शर्मा

❖

प्रबन्ध सम्पादक

महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक : **बसंत जिंदल**

❖

प्रेषण प्रभारी : **नौरंग सहाय 'भारतीय'**

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राजस्थान) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली - 110053

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

वार्षिक शुल्क ₹ 300/-
दस वर्षीय शुल्क ₹ 2500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है तथा चित्रों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया गया है।

प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक चेतना में आर्षशिक्षा का अवदान

❑ **डॉ. आशुतोष पारीक**

'विकसित भारत @ 2047' का स्वप्न शिक्षा और 'पंच परिवर्तन' के समन्वय से ही साकार हो सकता है। शिक्षा जहाँ ज्ञान और कौशल प्रदान करती है, वहीं 'पंच परिवर्तन' जीवन मूल्यों और सामाजिक उत्तरदायित्व की दिशा निर्धारित करता है। जब विद्यार्थी इन पाँच मूल्यों को अपने जीवन में आत्मसात करेंगे, तब वे न केवल सफल नागरिक बनेंगे, बल्कि राष्ट्र के सशक्त निर्माण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे। अंततः, शिक्षा और 'पंच परिवर्तन' का संगम ही भारत को एक विकसित, आत्मनिर्भर और विश्वगुरु राष्ट्र बनाने की दिशा में अग्रसर करेगा।

4

अनुक्रम

3.	संपादकीय	-	प्रो. शिवशरण कौशिक
7.	विकसित भारत की शिक्षा और राष्ट्र	-	डॉ. धर्मेन्द्र शास्त्री
9.	भारतीय संदर्भ में शिक्षा और राष्ट्रवाद	-	डॉ. अभिषेक वशिष्ठ
12.	नालंदा से नये भारत तक : शिक्षा में भारतीयता...	-	डॉ. गिरीश शास्त्री
15.	प्राचीन भारत की 64 शिक्षा कलाओं में झलकती...	-	प्रो. बबन भिवसेन जाधव
17.	भारतीय ज्ञान परम्परा एवं राष्ट्रवाद	-	डॉ. नरेश कुमार वर्मा
20.	स्वदेशी ऊर्जा और आत्मनिर्भर भारतीय ग्राम	-	बलकार सिंह पूनियाँ
22.	भारतीय शिक्षा और संस्कृति का महत्त्व	-	डॉ. शीतल राकेश डुम्बेरे
25.	समावेशी धर्मनिरपेक्षता से छद्म धर्मनिरपेक्षता...	-	डॉ. संतोष कँवर शेखावत
30.	From Gurukul to Global Classrooms ...	-	Dr. Anjali K. Patil
33.	The Importance of Education in the ...	-	Dr. Pankaj Chakraborty
36.	India Transformed Towards a Value Based...	-	Dr. Anil Kumar Biswas
39.	Education and Indian Culture : Ancient ...	-	V. Venkata Ramana Rao
41.	Education, Artificial Intelligence, and the	-	Dr. Jitendar

Before Macaulay : The Untold History of Indian Education

❑ **Dr. Mandala Chandrashekhar Goud**

To study the history of education in Indian society is, therefore, not an exercise in nostalgia. It is an act of justice: justice to the millions of teachers and students whose tradition was not merely interrupted but deliberately delegitimised. It is also an act of imagination: a recovery of possibilities. The Gurukula's wholeness, the traditional occupation's dignity of craft, the 64 kalas' refusal to rank one form of knowledge above another, and the universal aspiration of Nalanda, these are not relics to be displayed in a museum.

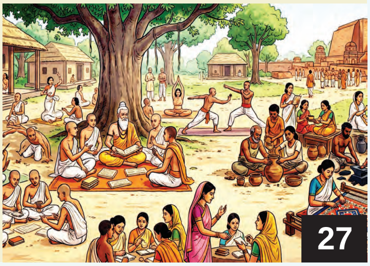

27

संपादकीय

प्रो. शिवशरण कौशिक
संपादक

भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में शिक्षा की भूमिका और भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है जहाँ अनेक भाषाएँ, उप-संस्कृतियाँ, परंपराएँ और सामाजिक परिस्थितियाँ हैं। ऐसी स्थिति में शिक्षा ही वह शक्ति है जो विविधता में एकता स्थापित करती है, नागरिकों में राष्ट्रीय चेतना का विकास करती है और संवैधानिक मूल्यों को जन सामान्य तक पहुँचाती है। शिक्षा व्यक्ति को अधिकारों के साथ कर्तव्यों का भी बोध कराती है। वह सिखाती है कि राष्ट्र केवल किसी भू-भाग का नाम नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक इकाई है।

आज समूची दुनिया अशांत है, अधिनायकवाद और प्राकृतिक संसाधनों पर एकाधिकार की मानसिकता ने अनेक देशों को युद्ध की विभीषिका में धकेला है जिससे अनेक देशों में अस्थिरता उत्पन्न हुई है। विश्व के आर्थिक विकास के साथ विज्ञान एवं तकनीकी उन्नति के उपरांत भी विश्वभर का मनुष्य अधिक त्रस्त है। अवसाद और आत्महत्याओं का क्रम निरंतर बढ़ा है, विशेष रूप से विद्यार्थियों तथा रोजगारोन्मुख युवाओं में। इसके अनेक कारण हो सकते हैं, संभवतः उनमें सबसे प्रमुख कारण शिक्षा का राष्ट्र-केंद्रित तथा विद्यार्थी-केन्द्रित न होकर व्यवस्था-केन्द्रित होना है।

वस्तुतः शिक्षा केवल व्यक्ति के जीवन निर्वाह का माध्यम नहीं है, बल्कि व्यक्ति-निर्माण और राष्ट्र-निर्माण का सबसे सशक्त आधार है। यदि शिक्षा सुदृढ़, संस्कार-संपन्न, समावेशी और उद्देश्यपूर्ण हो, तो राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल होता है। यदि शिक्षा दिशाहीन हो तो विकास की गति भी अवरुद्ध हो जाती है। इसलिए आज शिक्षा को केवल रोजगार प्राप्ति का साधन न मानकर राष्ट्रहित का व्यापक माध्यम बनाने की आवश्यकता है।

आज जब विश्व तीव्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है, विज्ञान, तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल क्रांति और वैश्विक प्रतिस्पर्धा के कारण नए अवसरों के साथ नई चुनौतियाँ भी प्रस्तुत हुई हैं। ऐसे समय में यह और भी प्रासंगिक हुआ है कि हमारी शिक्षा ऐसी हो जो युवाओं को केवल डिग्रीधारी न बनाए, बल्कि उन्हें कौशलयुक्त, नवाचारी, आत्मनिर्भर और संवेदनशील नागरिक बनाए। इन सभी उद्देश्यों की समग्र प्राप्ति के उपबंध राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में किए गए हैं और यह इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है, जो भारतीय ज्ञान परंपरा, बहुभाषिकता, कौशल विकास और समग्र शिक्षा पर बल देती है।

शिक्षा का दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष है–चरित्र निर्माण। ज्ञान यदि नैतिकता से रहित हो जाए, तो वह समाज के लिए संकट बन सकता है। इसलिए शिक्षा में सत्य, अनुशासन, परिश्रम, सहिष्णुता, सेवा, करुणा और राष्ट्रप्रेम जैसे मूल्यों का समावेश अनिवार्य है। शिक्षण संस्थान केवल पाठ्यक्रम पूर्ण करने के केंद्र न बनें, बल्कि संस्कार निर्माण के प्रेरक स्थल बनें। विद्यार्थी शिक्षा पूर्ण होने पर जब समाज और राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व का भाव लेकर निकलेंगे, तभी शिक्षा सार्थक मानी जाएगी। किन्तु यह तब तक संभव नहीं है जब तक कि संपूर्ण भारत के ग्रामीण-शहरी, अगड़े-पिछड़े, महिला-पुरुष जैसे सभी भारतीयों को शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध नहीं होते। हमें ऐसी व्यवस्था बनानी होगी जिसमें हर बालक-बालिका को उत्कृष्ट शिक्षा मिले, चाहे वह गाँव में रहता हो या शहर में। डिजिटल संसाधनों का न्यायपूर्ण विस्तार, प्रशिक्षित शिक्षक, सुदृढ़ विद्यालय व्यवस्था और सामाजिक सहयोग इस दिशा में महत्त्वपूर्ण साधन हैं।

शिक्षा नीति के क्रियान्वयन तथा राष्ट्र-निर्माण में शिक्षकों की केन्द्रीय भूमिका है। शिक्षक केवल विषय विशेषज्ञ नहीं, बल्कि समाज निर्माता होते हैं। वे विद्यार्थियों के मन में स्वप्न जगाते हैं, सोचने की क्षमता विकसित करते हैं और मार्गदर्शन करते हैं। अतः शिक्षकों को भी शिक्षार्थी के लिए पूर्ण समर्पण से कार्य करना चाहिए। भारत में श्रेष्ठ शिक्षक और गुरुओं का सुदीर्घ इतिहास तथा परंपरा रही है। गुरु विश्वामित्र के शिष्य राम, सांदीपनि के शिष्य कृष्ण, आचार्य चाणक्य के शिष्य चंद्रगुप्त, स्वामी समर्थ रामदास के शिष्य शिवाजी, रामकृष्ण परमहंस के शिष्य स्वामी विवेकानंद ऐसे ही योग्य शिष्य हुए हैं जिन्होंने अपने शिक्षक का गौरव बढ़ाया और अलग-अलग समय में विभिन्न सामाजिक क्रांतियों और युग परिवर्तन के सूत्रधार बने।

शिक्षा ही वह शक्तिशाली अस्त्र है जो व्यक्ति के जीवन को नई दिशा देने के साथ समाज और राष्ट्र का समग्र तथा सतत विकास करता है। शिक्षा से ही सामाजिक रुग्णता और विकृतियों को दूर किया जा सकता है और परहितकारिता, वसुधैव कुटुंबकम् तथा संवेदनशीलता के विचार के साथ विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का निर्माण किया जा सकता है।

आज शिक्षा को परीक्षा-केंद्रित मानसिकता से मुक्त कर जीवन-केंद्रित बनाए जाने की आवश्यकता है। अंकों की दौड़ से आगे बढ़कर अनुसंधान, रचनात्मकता, खेल, कला, संस्कृति, उद्यमिता और सामाजिक सहभागिता को शिक्षा का हिस्सा बनाना अनिवार्य हो, तभी शिक्षा राष्ट्र के लिए उपयोगी होगी।

'शैक्षिक मंथन' का यह अंक इसी विचार को समर्पित है कि शिक्षा केवल व्यक्तिगत उन्नति नहीं अपितु राष्ट्रोत्थान का प्रमुख मार्ग है। वर्तमान में हमारी युवा पीढ़ी के समक्ष भारतीय जीवन-मूल्य और आधुनिकता, प्राचीन तथा अर्वाचीन के साथ परंपरा और विज्ञान के बीच सामंजस्य बनाने की भी बड़ी चुनौती है। यद्यपि राष्ट्रीय शिक्षा-नीति 2020 में इसके समाधानों पर ध्यान दिया गया है तभी भारत वैश्विक नेतृत्व करने वाला राष्ट्र बन सकेगा। फिर भी इसके सफल क्रियान्वयन में शिक्षक, विद्यार्थी, अभिभावक, समाज और सरकार की सामूहिक जिम्मेदारी है। ❑

प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक चेतना में आर्षशिक्षा का अवदान

डॉ. आशुतोष पारीक
आचार्य, संस्कृत विभाग
सम्राट पृथ्वीराज चौहान
राजकीय महाविद्यालय,
अजमेर, राजस्थान

भारतवर्ष आर्ष चेतना की भूमि है। भारतीय संस्कृति की सर्वकल्याणपरक अजस्र धारा ने भारत को विश्वगुरु के रूप में प्रतिष्ठित किया, जिसमें आर्ष शिक्षा की गुरुकुलीय परम्परा की महती भूमिका रही। 'सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा', 'सर्वे भवन्तु सुखिनः', तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्य स्विद्धनम्', 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्', 'न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः', 'आत्मवत् सर्वभूतेषु', 'वसुधैव कुटुम्बकम्' जैसे उदात्त भावों ने भारतीय चिन्तन को वैश्विक व्यापकता प्रदान की और भारतीय शिक्षा ने सम्पूर्ण विश्व को इसके ज्ञान, विज्ञान और प्रज्ञान से आलोकित करने के लिए एक सुस्पष्ट सुलक्ष्य आधारित सुघटित व्यवस्था को जन्म दिया, जिसे आज भारतीय ज्ञान परम्परा (आईकेएस) के रूप में भारत के आत्मगौरव की पुनः स्थापना के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आधारभूत सिद्धान्त के रूप में प्रतिपादित किया गया है। इसी भारतीय चिन्तन को वैश्विक धरा पर सर्वसुलभ एवं व्यापक बनाने के लिए महर्षि मनु ने कहा था–

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥

(मनुस्मृतिः 2.20)

शिक्षा, सभ्यता और संस्कृति का सह–सम्बन्ध – प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं शिक्षा प्रणाली आदिकाल से ही समस्त विश्व के लिए आकर्षण का केन्द्र रही है। सभ्यता जहाँ बाह्यजीवन को अभिव्यक्त करती है, वहीं संस्कृति आत्मस्थानी होकर मूल्यों के सूक्ष्म चिन्तन की वाहिका होती हैं। ऋषि–मुनियों द्वारा आर्षशिक्षाप्रणाली के माध्यम से आर्यों ने दीर्घकाल तक सांस्कृतिक, ज्ञानात्मक और सामाजिक रूप से एक उन्नत समाज के अस्तित्व को बनाए रखा। इतिहासकार एवं शिक्षाविद् यह स्वीकार करते हैं कि तत्कालीन शिक्षा प्रणाली ने ही संस्कारों की ऐसी नींव हमारे मन–मस्तिष्क और कर्मों में रख दी कि आज भी हम अनायास ही इनकी ओर अभिमुख हो जाते हैं।

प्राच्यशिक्षापद्धति मनुष्य के सर्वांगीण विकास की सांगोपांग अभिव्यक्ति है। शिक्षा किस प्रकार के कौशल को प्रदान करने वाली हो, वर्तमान काल में भी उपादेय उद्दश्यों का सुन्दर चित्रण करते हुए अथर्ववेद कहता है–

वर्धयैनं ज्योतयेनं महते सौभगाय।
संशित् चित् संतरं सं शिशाधि॥

(अथर्ववेद 7.16.1)

अर्थात् (शिक्षा) व्यक्ति की बुद्धि को विकसित, परिष्कृत, तीक्ष्ण, उन्नति के पथ पर अग्रसर और महान् सौभाग्ययुक्त बनाए। वहीं यजुर्वेद में शिक्षाव्रती के व्रत का लाभ बताते हुए कहा गया है–

व्रतेन दीक्षामाप्नोति, दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति, श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

(यजुर्वेद 19.30)

शिक्षा का परमोद्देश्य आत्मिक उन्नति करते हुए मुक्ति या ब्रह्म की प्राप्ति है। इसीलिए कहा गया है– 'सा विद्या या विमुक्तये।' आर्षशिक्षा पद्धति द्वारा मनुष्य में चिन्तनशक्ति, मननशक्ति तथा विवेकशक्ति

 ISSN 2581-4133

को जाग्रत करने की बात कही गई है। ऋग्वेद के अनुसार हम मनु की सन्तान के रूप में उन्हीं के समान बनें- 'मनुर्भव, जनया दैव्यं जनम्' (ऋग्वेद 10.53.6)।

चरित्रनिर्माता शिक्षक – ऋग्वेद में शिक्षक के गुणों की चर्चा अग्नि के रूप में की गई है – 'वेधा अदृप्तो अग्निर्विजानन्, ऊधर्न गोनां स्वाद्मा पितूनाम्। पिता पुत्रः सन्॥' (ऋग्वेद 1.69.12) अर्थात् शिक्षक को चरित्रनिर्माता (वेधस्), दर्प या अभिमानरहित (अदृप्त), तेजस्वी (अग्नि), विविध विषयों का ज्ञाता (विजानन्), गोस्तन के समान ज्ञानरूपी दूध देने वाला (ऊधर्न गोनाम्), विषय को स्वादिष्ट अर्थात् मधुर बनाने वाला (स्वाद्मा पितूनाम्), आचार्यों का पुत्रवत् शिष्य होने पर भी उच्च योग्यता के द्वारा अपने आचार्यों से भी अधिक योग्य होकर उनके द्वारा भी आदरणीय हो अर्थात् पुत्र होने पर भी पिता के तुल्य आदरणीय (पिता पुत्रः सन्) हो। वहीं अथर्ववेद आचार्य के लिए कहता है- 'आचार्यो ब्रह्मचारी।' (अथर्ववेद 11.5.16) ऋग्वेद का एक अन्य मंत्र शिक्षक की योग्यता के विषय में उपदिष्ट करता है- 'कविम् अद्वयन्तम् प्रचेतसम् अमृतं सप्रतीकम्।' (ऋग्वेद 3.29.5) अर्थात् एक शिक्षक क्रान्तदर्शी हो, उसका दृष्टिकोण व्यापक हो, वह संशययुक्त विचारों वाला न हो, प्रबुद्ध विचारों वाला हो, दिव्य चरित्र वाला हो और सदा प्रसन्नचित्त रहे। निरुक्त में यास्काचार्य शिक्षक के कर्तव्यों के विषय में लिखते हैं-

यमेव विद्याः शुचिमप्रमत्तं,
मेधाविनं ब्रह्मचर्योपपन्नम्।
यस्ते न द्रुह्येत् कतमच्चनाह,
तस्मै मा ब्रूया निधिपाय ब्रह्मन्॥

(निरुक्त 2.4)

अतः शिक्षक को सांस्कृतिक चेतना का पथप्रदर्शक, सामाजिक नियमों का दिग्दर्शक, राष्ट्र का निर्माता और विश्व का संरक्षक कहा जा सकता है। समाज में शिक्षक से यह अपेक्षा की गई कि वह अपनी महत्ता को समझे और तदनुरूप आचरण करे। साथ ही उन्नत शिक्षा द्वारा प्रदत्त सांस्कृतिक मूल्यों ने इस अपेक्षा को पीढ़ी दर पीढ़ी पूर्ण विश्वास और दृढ़ता से हस्तान्तरित किया।

उत्तरदायी विद्यार्थी – प्राच्य शिक्षा में गुरु और शिष्य दोनों ही शुद्ध मन व हृदय से अध्ययन-अध्यापन का कार्य करते थे। रोचक पद्धतियों द्वारा विषय को सरलता से समझाने के लिए ही उपनिषदों की कथोपकथन शैली तथा विभिन्न कथासाहित्य की रचना की गई थी। शिक्षण में प्रश्नोत्तर विधि, परियोजना विधि तथा वादविवाद आदि विधियों का प्रयोग होता था। 'करो और सीखो' पर बल दिया जाता था। यजुर्वेद में कहा गया है कि स्वयं कार्य करो और स्वयं उसका फल भोगो – 'स्वयं वाजिन् तन्वं कल्पयस्व। स्वयं यजस्व, स्वयं जुषस्व॥' (यजुर्वेद 23.15) गुरु का निरादर करने वाले शिष्यों के बारे में निरुक्तकार कहते हैं-

अध्यापिता ये गुरुं नाद्रियन्ते,
शिष्या वाचा मनसा कर्मणा वा।
यथैव ते न गुरोर्भोजनीयाः,
तथैव तान् न भुनक्ति श्रुतं तत्॥

(निरुक्त 2.4)

समाजवाहिनी शिक्षा – प्राचीन भारत में उन्नत शिक्षा को प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार एवं समाज का दायित्व माना गया था, जिसके लिए अनेक सामाजिक नियम सुनिश्चित किए गए। प्राचीन आर्ष शिक्षा सामान्य जीव से मनुष्य, मनुष्य से देव और देव से ऋषि बनाने की प्रणाली थी। शिक्षा व्यक्तित्व निर्माण के द्वारा उसकी सामाजिक, आध्यात्मिक एवं वैश्विक उद्देश्यों की पूर्ति करने वाली होनी चाहिए। आर्षकालीन महती गुरुपरम्परा की वाहिका प्राच्यशिक्षा पद्धति समाज के प्रति पूर्णतः उत्तरदायी थी। समाज के लिए श्रेष्ठ सामाजिक नागरिकों की सुदृढ़ निर्मात्री एवं सांस्कृतिक मूल्यों की पोषिका थी।

आर्षकालीन शिक्षा द्वारा समाजव्यवस्था इतने सुदृढ़ आधारों पर टिकी थी कि उस व्यवस्था का उल्लंघन करना असम्भव-सा था और यही कारण है कि जब इन व्यवस्थाओं में विकृति आने लगी तो भी हम इनका उल्लंघन नहीं कर पाए। वर्तमान भारत दो बड़ी विकृतियों से जूझ रहा है- 1. स्व की और सामाजिक विकृतियों से, 2. व्यवस्थागत विकृतियों से। आज शिक्षा भारत के सांस्कृतिक वैभव के साथ तादात्म्य स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील है। ये प्रयत्न निश्चित रूप से शिक्षा की विकृतियों को दूर कर समाज को सुदृढ़ एवं मूल्यपरक बनाएँगे।

स्वायत्त गुरुकुल परम्परा – आर्ष शिक्षा पद्धति की सफलता तत्कालीन शिक्षकों और समाज की व्यापक विचारधारा का परिणाम थी। राजा स्वयं जानता था कि गुरुकुल प्रणाली में अनावश्यक रूप से हस्तक्षेप वहाँ अध्ययनरत भविष्य के नागरिकों के लिए उचित नहीं है। सामान्यतः गुरुकुलों की सुरक्षा का प्रबन्ध भी गुरु पर ही होता था। अतः स्वायत्तता के दृष्टिकोण से तत्कालीन गुरुकुल पूर्णतः स्वायत्तशासी होते थे। आर्थिक प्रबन्धन के लिए आवश्यकता होने पर ही गुरुकुल राज्य से मदद लेते थे क्योंकि गुरुकुलों ने अपनी आवश्यकता को अत्यन्त सीमित कर रखा था। अतः श्रेष्ठ आचार्यों के वे गुरुकुल स्वायत्त होने के लिए पूर्णतया सन्नद्ध थे और राष्ट्रसेवा के लिए समर्पित थे।

आर्षगुरुकुलों की इसी स्वायत्त प्रणाली ने सांस्कृतिक मूल्यों को सुरक्षित, संरक्षित

> 'विकसित भारत @ 2047' का स्वप्न शिक्षा और 'पंच परिवर्तन' के समन्वय से ही साकार हो सकता है। शिक्षा जहाँ ज्ञान और कौशल प्रदान करती है, वहीं 'पंच परिवर्तन' जीवन मूल्यों और सामाजिक उत्तरदायित्व की दिशा निर्धारित करता है। जब विद्यार्थी इन पाँच मूल्यों को अपने जीवन में आत्मसात करेंगे, तब वे न केवल सफल नागरिक बनेंगे, बल्कि राष्ट्र के सशक्त निर्माण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे। अंततः, शिक्षा और 'पंच परिवर्तन' का संगम ही भारत को एक विकसित, आत्मनिर्भर और विश्वगुरु राष्ट्र बनाने की दिशा में अग्रसर करेगा।

रखते हुए पोषित एवं पल्लवित किया। संस्कृति का पोषण किसी शासक के आदेश से नहीं, अपितु स्वत्व के बोध और आत्म के चिन्तन से होता है। सांस्कृतिक संवर्धन के लिए अभय और जागरूक सन्ततियों के लिए ऐसे गुरुकुल एवं संस्थान निश्चित रूप से उपादेय होंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ऐसे ही स्वायत्त संस्थानों की अनुशंसा करती है जो स्वतन्त्र रूप से विश्व के शैक्षिक और शोधपरक नवाचारों को गति प्रदान करें।

वर्तमान भारत में शिक्षा – वर्तमान भारत अब जाग रहा है। हम अपनी गुलाम की हीन मानसिकता से मुक्त होने की ओर अग्रसर हैं। शिक्षा किसी सरकार की दासी नहीं, अपितु इस देश की निर्मात्री है। अत: उसका सम्मान एवं स्थान उसी के अनुरूप होना चाहिए। शिक्षा कोई हथियार नहीं, अपितु प्रकाश है अन्धकार के विनाश के लिए। शिक्षा कोई साधन नहीं, अपितु साध्य है जीवन को गति प्रदान करने के लिए। शिक्षा कोई अधिकार नहीं, अपितु कर्तव्य है स्व से बढ़कर दूसरे के हित के लिए। शिक्षा त्याग है, समर्पण है और विकास का उन्नत आधान है।

वर्तमान जगत् में हम देखते हैं कि सरकार बदलते ही अधिकारी बदल जाते हैं, अधिकार बदल जाते हैं और आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक उद्देश्यों के समान ही शैक्षिक उद्देश्य एवं तन्निहित व्यवस्थाएँ भी बदल जाती हैं। शैक्षिक उद्देश्य जिन्हें पूर्व पीढ़ी का प्रसाद और आने वाली पीढ़ी का बीज कहा जाता है, वे इतने निरन्तर बदलते रहेंगे तो विचार कीजिए उसमें से अंकुर प्रस्फुटन कैसे संभव हो पाएगा। क्या सरकारों के बदलने से मानवीय उद्देश्य बदल सकते हैं? क्या सत्ता परिवर्तन तक सीमित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ही जन्म से मृत्युपर्यन्त चलने वाली शिक्षाव्यवस्था को स्थापित किया गया था? बीज से अंकुरण के लिए उपजाऊ मिट्टी, सूर्य का प्रकाश एवं जल ही नहीं, पर्याप्त समय भी आवश्यक होता है।

वर्तमान शिक्षा ने चरित्र की अपेक्षा आजीविका, धर्म की अपेक्षा अर्थ, कर्तव्य की अपेक्षा अधिकार, पर की अपेक्षा स्व, चित्त की अपेक्षा वित्त, अध्यात्म की अपेक्षा भौतिकता, साध्य की अपेक्षा साधन और कर्म की अपेक्षा फल को अधिक महत्त्व दिया है। और यही कारण है कि संस्कृति का स्थान विकृति ने ले लिया है और इस विकृति का लाभ सत्ता ने और स्वार्थी तत्त्वों ने खूब उठाया है। शिक्षा कदापि सत्ता के संकुचित स्वार्थों की पूर्ति की वाहिका न हो, यह शिक्षाजगत् से जुड़े प्रत्येक शिक्षक एवं छात्र का कर्तव्य होना चाहिए। सत्ताओं ने निजी स्वार्थ के लिए अनेक बार शिक्षा को अपनी दासी बनाने का प्रयास किया है किन्तु बुद्धि सदैव पैसे और शारीरिकशक्ति से अधिक बलवती होती है। अत: हमें भी ऐसे ही मुक्तिदायक, सन्मार्ग प्रेरक और अमृत स्वरूप ज्ञान से शिक्षा के मौलिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्नशील होना होगा।

शिक्षाव्रती एवं कर्मशील बनें – एक शिक्षक को शिक्षाव्रती होकर सम्पूर्ण विश्व के लिए समुन्नत विद्यार्थियों का निर्माता बनना चाहिए। आर्ष शिक्षा पद्धति के अन्तर्गत शिक्षा के प्रारम्भ में गुरु अग्नि को साक्षी मानकर व्रत लेता है कि मैं असत्य भाषण, असत्य व्यवहार और असद् विचार आदि का परित्याग करके सत्य मार्ग को अपनाता हूँ। साथ ही मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि मैं अपने इस व्रत का पूर्ण सफलता से निर्वाह करूँ–

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि,
तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यम् उपैमि॥

(यजुर्वेद 1.5)

आज सांस्कृतिक मूल्यों की सत्प्रेरिका शिक्षा, शिक्षा के प्रति समर्पित शिक्षक, शिक्षक के प्रति ध्येयनिष्ठ विद्यार्थी और विद्यार्थी के हित में संलग्न समाज की महती आवश्यकता है। यदि वर्तमान शिक्षक स्वत्व के जागरण और समाज के हित-चिन्तन के लिए तैयार है तो सांस्कृतिक चेतना की संवाहिका के रूप में स्वायत्त संस्थाएँ निश्चित रूप से वर्तमान युग को एक नवीन शैक्षिक युग में ले जा सकती हैं। अत: शिक्षा के मर्म को जानें और अपने कर्म को पहचानें। जीवन के प्रति यह स्पष्ट दृष्टि ही हमें अभ्युदय और नि:श्रेयस् की सिद्धि करने में सहायक हो सकती है। अत: आइए हम सब मिलकर प्राच्य शिक्षा की उन मूलभूत अभ्युदयकारक एवं नि:श्रेयस्साधक सांस्कृतिक परम्पराओं को समाज में पुन: स्थापित करने का प्रयत्न करें, जिससे शिक्षा की निर्बाध गति हो...।

समानी व आकूति: समाना हृदयानि व:।
समानमस्तु वो मनो यथा व: सुसहासति॥

(ऋग्वेद 10.191.4)

हमारा उद्देश्य एक हो, हमारी भावनाएँ सुसंगत हों। हमारे विचार एकत्रित हों। ठीक वैसे ही जैसे इस विश्व के, ब्रह्मांड के विभिन्न पहलुओं और क्रियाकलापों में तारतम्यता और एकता है। ❑

 ISSN 2581-4133

विकसित भारत की शिक्षा और राष्ट्र

डॉ. धर्मेन्द्र शास्त्री
मुख्याध्यापक
राजकीय आदर्श उच्च
विद्यालय, करसान
(रामदरबार फेस-1), चंडीगढ़

किसी भी राष्ट्र का भविष्य उसकी कक्षाओं में निर्मित होता है। 'विकसित भारत @2047' का लक्ष्य केवल आर्थिक प्रगति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक सांस्कृतिक, नैतिक और बौद्धिक पुनर्जागरण का आह्वान है। इस लक्ष्य की प्राप्ति में शिक्षा सबसे महत्त्वपूर्ण स्तंभ है।

आज आवश्यकता है कि शिक्षा केवल जानकारी देने तक सीमित न रहे, बल्कि यह विद्यार्थियों में कौशल, संस्कार, नवाचार और राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध विकसित करे। इसी संदर्भ में 'पंच परिवर्तन' की अवधारणा अत्यंत प्रासंगिक है, जो विकसित भारत के निर्माण हेतु समाज में आवश्यक मूलभूत परिवर्तनों को रेखांकित करती है।

नई शिक्षा नीति (NEP 2020) : परिवर्तन की आधारशिला

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारत की शिक्षा व्यवस्था में एक क्रांतिकारी बदलाव का आधार प्रस्तुत करती है। यह नीति भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक वैश्विक आवश्यकताओं के बीच संतुलन स्थापित करती है।

मातृभाषा में शिक्षा, बहुविषयक दृष्टिकोण, और कौशल-आधारित शिक्षा इसके प्रमुख तत्त्व हैं। यह नीति विद्यार्थियों को केवल परीक्षा-उन्मुख न बनाकर जीवन-उन्मुख शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करती है, जो विकसित भारत की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है।

पंच परिवर्तन : विकसित भारत की वैचारिक दिशा

'पंच परिवर्तन' समाज और राष्ट्र के समग्र विकास के लिए पाँच प्रमुख मूल्यों या परिवर्तनों का समूह है, जिन्हें शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों में विकसित करना आवश्यक है। ये हैं :

(1) नागरिक कर्तव्य का पालन (Civic Responsibility): विद्यार्थियों को संविधान, कानून और सामाजिक नियमों का सम्मान करना सिखाना आवश्यक है। एक जिम्मेदार नागरिक ही राष्ट्र के विकास में सक्रिय योगदान दे

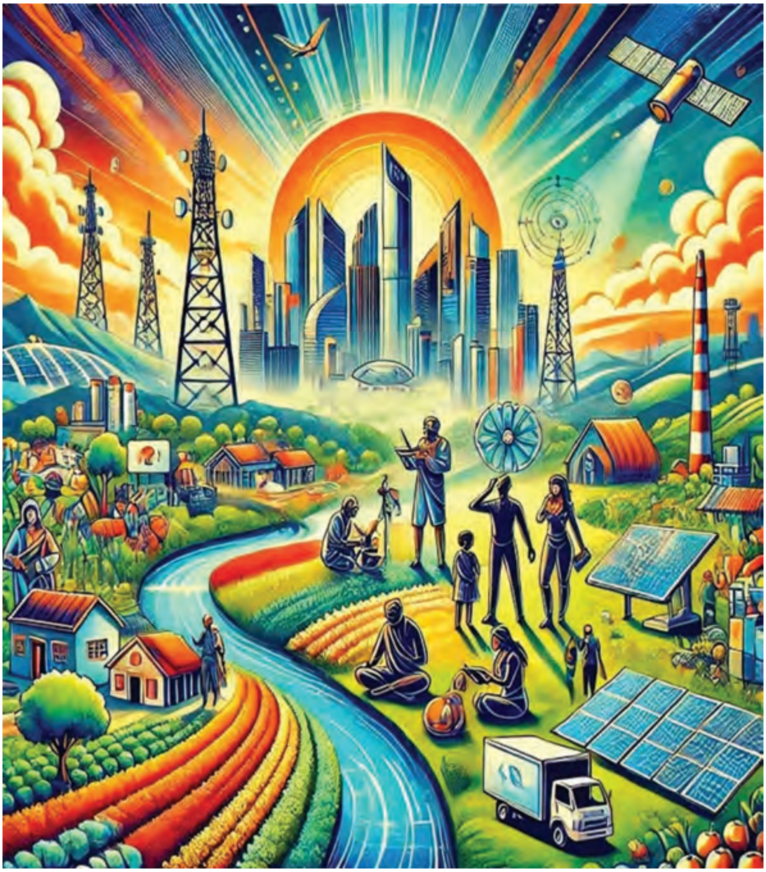

'विकसित भारत @ 2047' का स्वप्न शिक्षा और 'पंच परिवर्तन' के समन्वय से ही साकार हो सकता है। शिक्षा जहाँ ज्ञान और कौशल प्रदान करती है, वहीं 'पंच परिवर्तन' जीवन मूल्यों और सामाजिक उत्तरदायित्व की दिशा निर्धारित करता है। जब विद्यार्थी इन पाँच मूल्यों को अपने जीवन में आत्मसात करेंगे, तब वे न केवल सफल नागरिक बनेंगे, बल्कि राष्ट्र के सशक्त निर्माण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे। अंततः, शिक्षा और 'पंच परिवर्तन' का संगम ही भारत को एक विकसित, आत्मनिर्भर और विश्वगुरु राष्ट्र बनाने की दिशा में अग्रसर करेगा।

सकता है।

(2) पर्यावरण संरक्षण (Environmental Consciousness) : विकसित भारत का सपना तभी साकार होगा जब विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन बना रहेगा। विद्यार्थियों को जल संरक्षण, स्वच्छता और वृक्षारोपण के प्रति जागरूक बनाना आवश्यक है।

(3) सामाजिक समरसता (Social Harmony) : जाति, धर्म, भाषा और क्षेत्र के भेदभाव से ऊपर उठकर एकता और भाईचारे की भावना विकसित करना 'पंच परिवर्तन' का महत्त्वपूर्ण पहलू है।

(4) स्वदेशी और आत्मनिर्भरता (Self-Reliance) : स्थानीय उत्पादों और उद्योगों को बढ़ावा देना तथा आत्मनिर्भर बनने की भावना विद्यार्थियों में विकसित करना आवश्यक है।

(5) अनुशासन और नैतिकता (Discipline & Ethics) : व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में अनुशासन, ईमानदारी और नैतिक मूल्यों का पालन राष्ट्र निर्माण की आधारशिला है।

शिक्षा, नवाचार और अनुसंधान (R&D)

विकसित भारत के लिए आवश्यक है कि हम अनुसंधान और नवाचार के क्षेत्र में अग्रणी बनें। शिक्षा प्रणाली को इस प्रकार विकसित करना होगा कि विद्यार्थी नई खोजों, स्टार्टअप्स और तकनीकी नवाचारों की ओर प्रेरित हों।

STEM शिक्षा को बढ़ावा देकर और शोध संस्थानों को सशक्त बनाकर भारत वैश्विक प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ सकता है।

कौशल विकास और आत्मनिर्भरता

वर्तमान समय में कौशल विकास अत्यंत आवश्यक है। केवल डिग्री प्राप्त करना पर्याप्त नहीं, बल्कि विद्यार्थियों के पास व्यावहारिक कौशल भी होना चाहिए।

कक्षा 6 से ही व्यावसायिक शिक्षा और इंटर्नशिप को शामिल करना विद्यार्थियों को रोजगार के लिए तैयार करता है। इससे वे 'रोजगार खोजने वाले' नहीं, बल्कि 'रोजगार देने वाले' बन सकते हैं।

शिक्षा का सामाजिक आयाम

शिक्षा समाज में समानता और न्याय स्थापित करने का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम है। समावेशी शिक्षा के माध्यम से समाज के हर वर्ग तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पहुँचाना आवश्यक है।

इसके साथ ही, शिक्षा में नैतिक मूल्यों का समावेश विद्यार्थियों को जिम्मेदार और संवेदनशील नागरिक बनाता है।

तकनीक और डिजिटल सशक्तिकरण

डिजिटल युग में शिक्षा का स्वरूप तेजी से बदल रहा है। ऑनलाइन शिक्षा, स्मार्ट क्लासरूम और डिजिटल प्लेटफॉर्म ने शिक्षा को अधिक सुलभ और प्रभावी बना दिया है।

डिजिटल साक्षरता विद्यार्थियों को वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार करती है और उन्हें नई संभावनाओं से जोड़ती है।

चुनौतियाँ और समाधान

विकसित भारत के मार्ग में कई चुनौतियाँ हैं, जैसे–शिक्षा में निवेश की कमी, ग्रामीण–शहरी असमानता और गुणवत्तापूर्ण शिक्षकों की कमी।

इन चुनौतियों का समाधान शिक्षा के बुनियादी ढांचे को मजबूत करने, तकनीकी संसाधनों को बढ़ाने और शिक्षकों के प्रशिक्षण पर ध्यान देने से संभव है।

वैश्विक दृष्टिकोण और भारत का नेतृत्व

भारत का लक्ष्य केवल विकसित राष्ट्र बनना नहीं, बल्कि वैश्विक नेतृत्व स्थापित करना भी है। 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना के साथ भारत विश्व को शांति, सहयोग और सतत विकास का मार्ग दिखा सकता है।

शिक्षा के माध्यम से ऐसे नागरिक तैयार करने होंगे जो वैश्विक समस्याओं के समाधान में योगदान दे सकें।

निष्कर्ष

'विकसित भारत @ 2047' का स्वप्न शिक्षा और 'पंच परिवर्तन' के समन्वय से ही साकार हो सकता है। शिक्षा जहाँ ज्ञान और कौशल प्रदान करती है, वहीं 'पंच परिवर्तन' जीवन मूल्यों और सामाजिक उत्तरदायित्व की दिशा निर्धारित करता है।

जब विद्यार्थी इन पाँच मूल्यों को अपने जीवन में आत्मसात करेंगे, तब वे न केवल सफल नागरिक बनेंगे, बल्कि राष्ट्र के सशक्त निर्माण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे।

अंततः, शिक्षा और 'पंच परिवर्तन' का संगम ही भारत को एक विकसित, आत्मनिर्भर और नेतृत्वकारी राष्ट्र बनाने की दिशा में अग्रसर करेगा। ❑

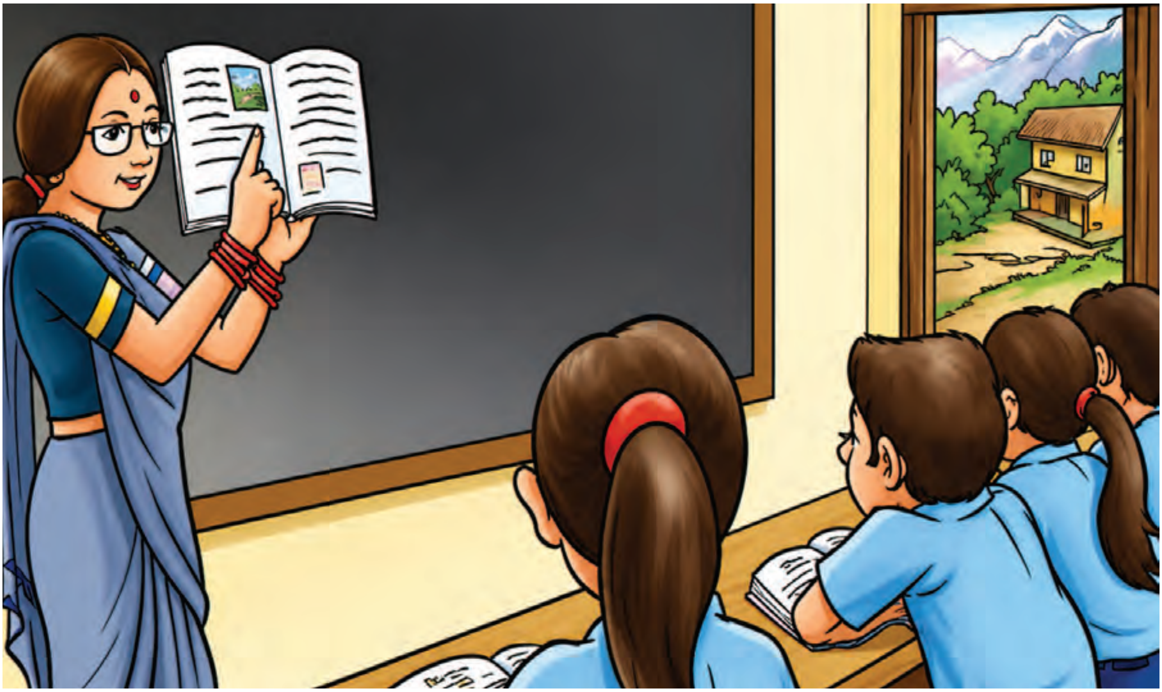

भारतीय संदर्भ में शिक्षा और राष्ट्रवाद

डॉ. अभिषेक वशिष्ठ

निदेशक शोध,
महाराजा गंगा सिंह
विश्वविद्यालय,
बीकानेर, राजस्थान

भारत एक प्राचीन सभ्यता और विविधताओं से परिपूर्ण राष्ट्र है, जिसकी एकता का आधार केवल राजनीतिक संरचना नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक चेतना भी है। यह एक सांस्कृतिक-सामाजिक एवं राजनीतिक इकाई है, जिसमें लोग साझा पहचान, परंपराओं और ऐतिहासिक अनुभवों से जुड़े हैं। राष्ट्र के रूप में भारत वस्तुगत अस्तित्व है, जबकि राष्ट्रवाद वह प्रेरक शक्ति है, जो उसे जीवंत, सुदृढ़, गतिशील और संगठित बनाए रखती है। समय के साथ वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद और क्षेत्रीय असमानताओं के कारण राष्ट्रवाद की भावना में कुछ हद तक शिथिलता आई है। ऐसे परिदृश्य में शिक्षा एक महत्त्वपूर्ण माध्यम के रूप में उभरती है, जो न केवल ज्ञान प्रदान करती है बल्कि राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक उत्तरदायित्व और सांस्कृतिक गौरव को भी सुदृढ़ करती है। राष्ट्रवाद की पुन:स्थापना में शिक्षा की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह नागरिकों को राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध और समर्पण की भावना से जोड़ती है।

राष्ट्रवाद की अवधारणा और भारतीय संदर्भ

राष्ट्रवाद केवल एक राजनीतिक विचारधारा नहीं, बल्कि यह एक भावनात्मक और सांस्कृतिक एकता का प्रतीक है। भारतीय संदर्भ में राष्ट्रवाद का अर्थ विविधता में एकता, सह-अस्तित्व, और साझा सांस्कृतिक विरासत का सम्मान है। राष्ट्रवाद को विभिन्न प्रकारों में समझा जा सकता है, जैसे राजनीतिक राष्ट्रवाद (जो राज्य और सत्ता के संगठन पर आधारित है), सांस्कृतिक राष्ट्रवाद (जो परंपराओं, भाषा और सांस्कृतिक पहचान पर आधारित है), नागरिक राष्ट्रवाद (जो संविधान, अधिकारों और कर्तव्यों पर आधारित है) तथा आर्थिक राष्ट्रवाद (जो स्वदेशी और आत्मनिर्भरता पर बल देता है)। भारत में इन सभी प्रकारों का समन्वित स्वरूप देखने को मिलता है। वर्तमान समय में राष्ट्रवाद का स्वरूप व्यापक हो गया है, जिसमें केवल देशभक्ति ही नहीं, बल्कि संविधान के मूल्यों, सामाजिक समरसता और लोकतांत्रिक आदर्शों का पालन भी शामिल है। शिक्षा इस बहुआयामी राष्ट्रवाद को समझने और आत्मसात करने का सबसे प्रभावी माध्यम है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में शिक्षा और राष्ट्रवाद

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में शिक्षा ने राष्ट्रवाद के विकास में केंद्रीय भूमिका निभाई। गुरुकुल प्रणाली से लेकर आधुनिक शिक्षा तक, विभिन्न शैक्षिक प्रणालियों ने राष्ट्रीय चेतना को जागृत

ISSN 2581-4133

किया। औपनिवेशिक काल में अंग्रेजी शिक्षा ने एक ओर आधुनिक विचारों को जन्म दिया, वहीं दूसरी ओर भारतीय नेताओं ने शिक्षा को राष्ट्रवाद के प्रसार का माध्यम बनाया। विशेष रूप से स्वदेशी आंदोलन के दौरान राष्ट्रीय शिक्षा संस्थानों की स्थापना ने भारतीयता को सशक्त किया। महात्मा गाँधी की बुनियादी शिक्षा और रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शांति निकेतन जैसे प्रयोगों ने शिक्षा को राष्ट्रनिर्माण से जोड़ा। इन प्रयासों ने न केवल स्वतंत्रता की भावना को जागृत किया, बल्कि आत्मनिर्भरता और सांस्कृतिक पुनर्जागरण को भी बल दिया, जिससे राष्ट्रवाद की जड़ें और गहरी हुईं। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान राष्ट्रवाद मुख्यत: औपनिवेशिक शासन के विरोध पर आधारित था, लेकिन स्वतंत्रता के बाद इसका स्वरूप सकारात्मक राष्ट्र निर्माण की दिशा में परिवर्तित हुआ। इस प्रक्रिया में शिक्षा की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण रही।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली और राष्ट्रीय चेतना

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में राष्ट्रवाद को पुन:स्थापित करने की अपार संभावनाएँ हैं।

प्राचीन भारत की 64 शिक्षा कलाएँ भारतीय संस्कृति के बहुआयामी स्वरूप को दर्शाती हैं। ये कलाएँ न केवल व्यक्ति के समग्र विकास का माध्यम थीं, बल्कि समाज में संतुलन, सौंदर्य और नैतिकता को भी स्थापित करती थीं। ये कलाएँ व्यक्ति के समग्र विकास, सामाजिक संतुलन और सांस्कृतिक समृद्धि का आधार थीं। आज आवश्यकता है कि हम इन कलाओं के मूल तत्त्वों को समझकर उन्हें आधुनिक शिक्षा प्रणाली में समाहित करें, ताकि एक संतुलित और सशक्त समाज का निर्माण किया जा सके।

पाठ्यक्रम, शिक्षण पद्धति और सह-पाठ्यक्रम गतिविधियों के माध्यम से छात्रों में राष्ट्रीय मूल्यों का विकास किया जा सकता है। यदि शिक्षा केवल रोजगारोन्मुखी बनकर रह जाए, तो वह राष्ट्र निर्माण में अपनी भूमिका को सीमित कर देती है। इसके विपरीत, यदि शिक्षा में नैतिकता, नागरिक शास्त्र, इतिहास और संस्कृति का समुचित समावेश हो, तो यह छात्रों में देश के प्रति गर्व और जिम्मेदारी की भावना विकसित करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी इसी दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है, जो समग्र, बहु-विषयक और मूल्य आधारित शिक्षा पर बल देती है। इसके अतिरिक्त, अनुभवात्मक ज्ञानार्जन, सेवा-शिक्षा, और सामुदायिक सहभागिता जैसे उपाय छात्रों को व्यावहारिक रूप से राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी बनाते हैं। इसमें समावेशी शिक्षा, स्थानीय भाषाओं का महत्त्व, और भारतीय ज्ञान परंपरा को पाठ्यक्रम में शामिल करने पर बल दिया गया है। इस प्रकार राष्ट्रवाद की पुनर्स्थापन केवल राजनीतिक नहीं, बल्कि शैक्षिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया भी है।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और शिक्षा का संबंध

भारतीय राष्ट्रवाद की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता इसका सांस्कृतिक आधार है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद उस विचार को व्यक्त करता है जिसमें राष्ट्र की पहचान उसकी सांस्कृतिक विरासत, परंपराओं, भाषा और जीवन शैली से निर्धारित होती है। भारत में यह अवधारणा प्राचीन सभ्यता, वेद-उपनिषद, बौद्ध-जैन दर्शन, भक्ति आंदोलन और स्वतंत्रता संग्राम की विरासत से जुड़ी हुई है।

भारतीय राष्ट्रवाद का स्वरूप पश्चिमी राष्ट्रवाद से भिन्न है, क्योंकि यहाँ विविधता में एकता का सिद्धांत प्रमुख है। भारत की सांस्कृतिक विविधता उसकी सबसे बड़ी शक्ति है। शिक्षा इस विविधता को समझने और उसका सम्मान करने की दृष्टि प्रदान करती है।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का अर्थ किसी एक संस्कृति का वर्चस्व नहीं, बल्कि सभी संस्कृतियों का समन्वय और सम्मान है। शिक्षा के माध्यम से छात्रों को भारतीय परंपराओं, भाषाओं, लोककलाओं और सांस्कृतिक धरोहरों से परिचित कराया जा

ISSN 2581-4133

सकता है। उदाहरण के लिए, लोक साहित्य, शास्त्रीय भाषाएँ और पारंपरिक ज्ञान प्रणालियाँ छात्रों में अपनी जड़ों के प्रति जुड़ाव उत्पन्न करती हैं। साथ ही, शिक्षा में भारतीय ज्ञान परंपरा का समावेश छात्रों को यह समझने में सहायता करता है कि भारत की सांस्कृतिक विरासत केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी प्रासंगिक है।

हालांकि, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के साथ संतुलन बनाए रखना भी आवश्यक है, ताकि यह विविधतापूर्ण समाज में समावेशिता को बाधित न करे। आधुनिक शिक्षा का उद्देश्य ऐसा राष्ट्रवाद विकसित करना है जो सांस्कृतिक गौरव के साथ-साथ लोकतांत्रिक मूल्यों और वैश्विक दृष्टिकोण को भी समाहित करे। इस प्रकार सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और भारतीय राष्ट्रवाद एक दूसरे के पूरक बन सकते हैं।

वैश्वीकरण के दौर में शिक्षा की भूमिका

आज का युग वैश्वीकरण का है, जहाँ सीमाएँ धुंधली होती जा रही हैं और सांस्कृतिक प्रभाव तेजी से बदल रहे हैं। इस परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रवाद को संकीर्ण दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि वैश्विक जिम्मेदारी के साथ जोड़कर देखने की आवश्यकता है। शिक्षा इस संतुलन को स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह छात्रों को वैश्विक नागरिक बनने के साथ-साथ अपने राष्ट्र की पहचान और मूल्यों को बनाए रखने की प्रेरणा देती है।

नैतिक और नागरिक शिक्षा का महत्त्व

राष्ट्रवाद केवल भावनात्मक जुड़ाव नहीं, बल्कि यह कर्तव्यों और जिम्मेदारियों का भी बोध कराता है। नैतिक और नागरिक शिक्षा के माध्यम से छात्रों में ईमानदारी, अनुशासन, सहिष्णुता और सामाजिक सेवा की भावना विकसित की जा सकती है। साथ ही, संविधान के मूल्यों-न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की समझ विद्यार्थियों को एक जिम्मेदार नागरिक बनाती है। जब नागरिक अपने अधिकारों के साथ-साथ अपने कर्तव्यों का भी समुचित पालन करते हैं, तभी सशक्त और नैतिक रूप से सुदृढ़ राष्ट्र का निर्माण संभव होता है।

शिक्षा और सामाजिक समरसता

भारत जैसे बहु-धार्मिक और बहु-भाषिक देश में सामाजिक समरसता राष्ट्रवाद की आधारशिला है। शिक्षा विभिन्न समुदायों के बीच आपसी समझ, सहिष्णुता और सहयोग की भावना को विकसित करती है। समावेशी शिक्षा प्रणाली, जो सभी वर्गों, जातियों और लिंगों को समान अवसर प्रदान करती है, सामाजिक विषमताओं को कम करने में सहायक होती है। इसके अतिरिक्त, विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में विविध सांस्कृतिक गतिविधियाँ छात्रों को 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना से जोड़ती हैं, जिससे राष्ट्रीय एकता और भाईचारा मजबूत होता है।

प्रौद्योगिकी और शिक्षा के माध्यम से राष्ट्रवाद

डिजिटल युग में शिक्षा का स्वरूप तेजी से परिवर्तित हो रहा है। ऑनलाइन शिक्षा, ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म और सोशल मीडिया के माध्यम से राष्ट्रवाद के विचारों का व्यापक और त्वरित प्रसार संभव हुआ है। डिजिटल माध्यम छात्रों को देश के इतिहास, संस्कृति और समसामयिक मुद्दों से जोड़ने का प्रभावी साधन बन रहे हैं। साथ ही, यह आवश्यक है कि छात्रों में डिजिटल साक्षरता, तथ्य-जांच और आलोचनात्मक सोच का विकास किया जाए, ताकि वे भ्रामक सूचनाओं से बचकर राष्ट्रहित में सही दृष्टिकोण विकसित कर सकें।

निष्कर्ष

शिक्षा राष्ट्रवाद की पुन:स्थापना में एक निर्णायक भूमिका निभाती है। यह न केवल ज्ञान का प्रसार करती है, बल्कि राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक गौरव और सामाजिक उत्तरदायित्व को भी सुदृढ़ करती है। एक ऐसी शिक्षा प्रणाली, जो नैतिकता, संस्कृति, और नागरिक कर्तव्यों पर आधारित हो, वही भारत में राष्ट्रवाद को पुन:स्थापित कर सकती है। ❑

नालंदा से नये भारत तक : शिक्षा में भारतीयता की पुनर्स्थापना

डॉ. गिरीश शास्त्री

सहायक आचार्य
मल्टीमीडिया एवं जनसंचार विभाग
इन्द्रप्रस्थ महिला महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

भारतीय शिक्षा परंपरा विश्व की प्राचीनतम एवं समृद्ध ज्ञान परंपराओं में से एक रही है। भारत में शिक्षा को केवल ज्ञान प्राप्ति या जीविकोपार्जन का माध्यम नहीं माना गया, बल्कि इसे व्यक्ति के समग्र व्यक्तित्व निर्माण तथा समाज के नैतिक उत्थान का साधन समझा गया। प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था का मूल उद्देश्य मनुष्य के बौद्धिक, नैतिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक विकास को सुनिश्चित करना था। यही कारण है कि भारत की गुरुकुल परंपरा तथा नालंदा, तक्षशिला और विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालय विश्वभर में ज्ञान के प्रमुख केंद्र माने जाते थे।

भारतीय शिक्षा व्यवस्था की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उसमें ज्ञान और जीवन के बीच कोई विभाजन नहीं था। शिक्षा दैनन्दिन व्यवहार, संस्कृति, नैतिकता, आध्यात्मिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व से जुड़ी हुई थी। परंतु औपनिवेशिक शासन के आगमन के पश्चात भारतीय शिक्षा प्रणाली में व्यापक परिवर्तन हुए। अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली ने भारतीय शिक्षा के मूल स्वरूप को प्रभावित किया और शिक्षा का उद्देश्य धीरे-धीरे प्रशासनिक कार्यों के लिए मानव संसाधन तैयार करने तक सीमित होता गया। फलस्वरूप भारतीयता, मातृभाषा, नैतिक शिक्षा और जीवनमूल्य शिक्षा व्यवस्था से धीरे-धीरे दूर होते चले गए।

वर्तमान समय में भारत पुनः अपनी सांस्कृतिक और शैक्षिक जड़ों की ओर लौटने का प्रयास कर रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इसी दिशा में एक महत्त्वपूर्ण पहल है, जो भारतीय ज्ञान परंपरा, मातृभाषा, समग्र विकास और मूल्यपरक शिक्षा को पुनर्स्थापित करने का प्रयास करती है। यह नीति आधुनिक शिक्षा को भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि से जोड़ते हुए 'नये भारत' के निर्माण की संकल्पना प्रस्तुत करती है।

नालंदाः भारतीय शिक्षा परंपरा का वैश्विक केंद्र

नालंदा विश्वविद्यालय प्राचीन भारत की ज्ञान परंपरा का सर्वोत्तम उदाहरण था। इसकी स्थापना पाँचवीं शताब्दी में गुप्त शासक कुमारगुप्त प्रथम के काल में मानी जाती है। यह विश्वविद्यालय लगभग सात सौ वर्षों तक शिक्षा और अनुसंधान का प्रमुख केंद्र बना रहा। चीन के प्रसिद्ध यात्री ह्वेनसांग और इत्सिंग ने अपने यात्रा-वृत्तांतों में नालंदा की शिक्षा व्यवस्था, अनुशासन और ज्ञान परंपरा का विस्तृत वर्णन किया है।

नालंदा केवल भारत का ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण एशिया का प्रमुख शैक्षिक केंद्र था। यहाँ चीन, कोरिया, जापान, तिब्बत, श्रीलंका तथा अन्य देशों से विद्यार्थी अध्ययन के लिए आते थे। विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए कठोर परीक्षा प्रणाली थी, जिससे शिक्षा

 ISSN 2581-4133

की गुणवत्ता सुनिश्चित होती थी।

नालंदा की शिक्षा व्यवस्था बहुविषयक थी। यहाँ दर्शन, व्याकरण, चिकित्सा, गणित, ज्योतिष, साहित्य, राजनीति, धर्म और तर्कशास्त्र जैसे विषय पढ़ाए जाते थे। शिक्षण पद्धति संवाद, वाद-विवाद और अनुसंधान आधारित थी। यह प्रणाली आज की आधुनिक शोधपरक शिक्षा प्रणाली के समान प्रतीत होती है। नालंदा का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष यह था कि वहाँ शिक्षा को जीवन और समाज से जोड़कर देखा जाता था। ज्ञान का उद्देश्य केवल सूचना देना नहीं, बल्कि व्यक्ति को नैतिक और उत्तरदायी नागरिक बनाना था। यही भारतीय शिक्षा का मूल स्वरूप था।

गुरुकुल परंपरा और शिक्षा का भारतीय दृष्टिकोण

भारतीय शिक्षा व्यवस्था की आधारशिला गुरुकुल परंपरा रही है। गुरुकुल में विद्यार्थी केवल विषयगत ज्ञान प्राप्त नहीं करते थे, बल्कि जीवन के आदर्शों, अनुशासन, संयम, सेवा और नैतिकता को भी सीखते थे। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को आत्मनिर्भर, विवेकशील और समाजोपयोगी बनाना था। भारतीय चिंतन में शिक्षा को 'सा विद्या या विमुक्तये' अर्थात् वह विद्या जो मुक्ति प्रदान करे, कहा गया है। इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षा का लक्ष्य केवल रोजगार प्राप्त करना नहीं था, बल्कि व्यक्ति के आंतरिक विकास और आत्मबोध को प्राप्त करना था।

नालंदा विश्वविद्यालय में भी गुरुकुल परंपरा की यही भावना दिखाई देती है। वहाँ शिक्षक और विद्यार्थी के बीच घनिष्ठ बौद्धिक एवं नैतिक संबंध होते थे। शिक्षा में अनुशासन, संवाद और आत्मानुशासन को विशेष महत्त्व दिया जाता था। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी इसी भारतीय दृष्टिकोण को पुनर्जीवित करने का प्रयास करती है। नीति में अनुभवात्मक अधिगम, कौशल आधारित शिक्षा, नैतिक मूल्यों तथा भारतीय ज्ञान परंपरा को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाने पर बल दिया गया है।

भारतीय शिक्षा परंपरा का मूल स्वरूप समग्र विकास, नैतिक मूल्यों, मातृभाषा और वैश्विक मानव कल्याण की भावना पर आधारित रहा है। नालंदा विश्वविद्यालय इस गौरवशाली परंपरा का जीवंत उदाहरण था, जिसने भारत को विश्वगुरु के रूप में प्रतिष्ठित किया। हालांकि औपनिवेशिक काल में भारतीय शिक्षा की मूल आत्मा को क्षति पहुँची, परंतु वर्तमान समय में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के माध्यम से भारतीयता को पुनर्स्थापित करने का गंभीर प्रयास किया जा रहा है। यह नीति प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक शिक्षा के बीच संतुलन स्थापित करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

समग्र विकास की अवधारणा

भारतीय शिक्षा का मूल उद्देश्य सदैव समग्र विकास रहा है। इसमें शरीर, मन और आत्मा के संतुलित विकास को आवश्यक माना गया है। प्राचीन भारतीय शिक्षा में योग, ध्यान, शारीरिक अभ्यास, कला, साहित्य और दर्शन सभी को शिक्षा का अभिन्न अंग माना जाता था। नालंदा में विद्यार्थियों को केवल शैक्षणिक ज्ञान ही नहीं दिया जाता था, बल्कि उनमें तार्किक क्षमता, नैतिक चेतना और सामाजिक उत्तरदायित्व का भी विकास किया जाता था। यह शिक्षा व्यक्ति को सम्पूर्ण रूप से विकसित करने का माध्यम थी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी समग्र विकास की अवधारणा को केंद्र में रखा गया है। यह नीति विद्यार्थियों में रचनात्मकता, समालोचनात्मक चिंतन, संचार कौशल और नैतिक मूल्यों के विकास पर बल देती है। यह दृष्टिकोण भारतीय शिक्षा दर्शन की आधुनिक पुनर्व्याख्या है।

मातृभाषा और सांस्कृतिक चेतना

भाषा किसी भी समाज की संस्कृति, परंपरा और विचारधारा की वाहक होती है। भारतीय शिक्षा परंपरा में मातृभाषा को ज्ञान अर्जन का सर्वश्रेष्ठ माध्यम माना गया है। नालंदा में संस्कृत और पाली जैसी भाषाओं के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जाती थी, जिससे भारतीय ज्ञान परंपरा का संरक्षण और प्रसार संभव हुआ। औपनिवेशिक काल में अंग्रेजी भाषा को शिक्षा का प्रमुख माध्यम बना दिया गया, जिसके कारण भारतीय भाषाओं और ज्ञान परंपरा को

नुकसान पहुँचा। इससे शिक्षा और समाज के बीच की दूरी बढ़ी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा या स्थानीय भाषा में प्रदान करने पर बल देती है। यह न केवल विद्यार्थियों की समझ और अभिव्यक्ति को बेहतर बनाता है, बल्कि उनकी सांस्कृतिक जड़ों को भी मजबूत करता है। मातृभाषा आधारित शिक्षा भारतीयता की पुनर्स्थापना का महत्त्वपूर्ण माध्यम बन सकती है।

लोकतांत्रिक मूल्य और वैश्विक दृष्टिकोण

भारतीय शिक्षा दर्शन का मूल भाव 'वसुधैव कुटुम्बकम्' और 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' जैसे आदर्शों में निहित है। भारतीय शिक्षा केवल व्यक्तिगत सफलता तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने समाज और विश्व कल्याण की भावना को भी प्रोत्साहित किया। नालंदा विश्वविद्यालय इसका उत्कृष्ट उदाहरण था, जहाँ विभिन्न देशों के विद्यार्थी अध्ययन करते थे। यह विश्वविद्यालय सांस्कृतिक आदान-प्रदान और वैश्विक बौद्धिक संवाद का केंद्र था। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी विद्यार्थियों में वैश्विक दृष्टिकोण विकसित करने पर बल देती है। साथ ही, नीति भारतीय मूल्यों और लोकतांत्रिक आदर्शों को शिक्षा के माध्यम से मजबूत करने का प्रयास करती है।

नया भारत और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को भारतीय शिक्षा प्रणाली में एक ऐतिहासिक परिवर्तन के रूप में देखा जा रहा है। यह नीति शिक्षा को अधिक समावेशी, बहुविषयक, कौशल आधारित और शोधपरक बनाने का प्रयास करती है।

नीति के प्रमुख उद्देश्यों में भारतीय ज्ञान परंपरा की पुनर्स्थापन, मातृभाषा में शिक्षा, कौशल विकास, अनुसंधान को बढ़ावा तथा तकनीकी शिक्षा का समावेश शामिल है। इसके माध्यम से शिक्षा को केवल डिग्री प्राप्ति तक सीमित न रखकर जीवनोपयोगी और मूल्यपरक बनाने का प्रयास किया गया है। यह शिक्षा नीति प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली की सकारात्मक विशेषताओं को आधुनिक तकनीक और वैश्विक आवश्यकताओं के साथ जोड़ती है। इस प्रकार यह 'नये भारत' के निर्माण की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है।

भारतीय शिक्षा परंपरा का मूल स्वरूप समग्र विकास, नैतिक मूल्यों, मातृभाषा और वैश्विक मानव कल्याण की भावना पर आधारित रहा है। नालंदा विश्वविद्यालय इस गौरवशाली परंपरा का जीवंत उदाहरण था, जिसने भारत को विश्वगुरु के रूप में प्रतिष्ठित किया। हालांकि औपनिवेशिक काल में भारतीय शिक्षा की मूल आत्मा को क्षति पहुँची, परंतु वर्तमान समय में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के माध्यम से भारतीयता को पुनर्स्थापित करने का गंभीर प्रयास किया जा रहा है। यह नीति प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक शिक्षा के बीच संतुलन स्थापित करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। यदि भारतीय शिक्षा प्रणाली में भारतीय मूल्यों, मातृभाषा, समग्र विकास और नैतिकता को प्रभावी रूप से लागू किया जाए, तो भारत पुन: ज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र में विश्व में अग्रणी स्थान प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार 'नालंदा से नये भारत तक' की यात्रा वास्तव में भारतीय शिक्षा में भारतीयता की पुनर्स्थापना की यात्रा है। ❑

प्राचीन भारत की 64 शिक्षा कलाओं में झलकती भारतीय संस्कृति

प्रो. बबन भिवसेन जाधव
इतिहास विभागप्रमुख,
पदव्युत्तर, पीएच.डी. संशोधन केंद्र
शिक्षण महर्षी दादासाहेब लिमये
महाविद्यालय कळंबोली,
नवी मुंबई, महाराष्ट्र

प्राचीन भारत की 64 कलाएँ केवल कौशलों की सूची नहीं, बल्कि एक समग्र जीवन-दर्शन का प्रतिबिंब हैं, जिसमें ज्ञान, व्यवहार और संस्कृति का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। ये कलाएँ व्यक्ति के बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास को संतुलित रूप से विकसित करती थीं। भारतीय शिक्षा परंपरा की यह विशेषता आधुनिक 'स्किल-बेस्ड' और 'होलिस्टिक एजुकेशन' की अवधारणा से गहराई से मेल खाती है। अतः 64 कलाओं के मूल तत्व आज भी प्रासंगिक हैं और उन्हें आधुनिक शिक्षा प्रणाली में समाहित करना समय की आवश्यकता है।

प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली केवल ज्ञानार्जन तक सीमित नहीं थी, बल्कि यह व्यक्ति के समग्र विकास का माध्यम थी। इस प्रणाली में बौद्धिक, शारीरिक, नैतिक एवं सांस्कृतिक विकास को समान महत्त्व दिया जाता था। '64 कलाएँ' इसी समग्र शिक्षा दृष्टिकोण का उत्कृष्ट उदाहरण हैं। शुक्राचार्य की शुक्रनीतीसार नामक ग्रंथ में 64 कलाएँ आयी हैं। शक्तो मूकोऽपि यत् कर्तु कलासंज्ञ तु तत् स्मृतम्। गूँगे व्यक्ति की भी कला हो सकती है। ये कलाएँ न केवल जीवन कौशल सिखाती थीं, बल्कि भारतीय संस्कृति के सौंदर्य, नैतिकता और सामाजिक संरचना को भी प्रतिबिंबित करती थीं।

'64 कलाएँ' का उल्लेख प्राचीन ग्रंथों जैसे 'कामसूत्र', 'नाट्यशास्त्र' तथा अन्य साहित्यिक कृतियों में मिलता है। इन कलाओं का उद्देश्य व्यक्ति को बहुआयामी बनाना था, जिससे वह समाज में दक्षता, सौंदर्यबोध और व्यावहारिकता के साथ जीवन व्यतीत कर सके।

इन कलाओं में मुख्यतः संगीत, नृत्य, चित्रकला, वास्तुकला, पाककला, हस्तशिल्प, संवाद कौशल, कूटनीति, खेल, चिकित्सा और जादू जैसे विविध विषय शामिल थे।

64 कलाएँ यह दर्शाती हैं कि प्राचीन भारत में शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं थी। उदाहरण के लिए, संगीत और नृत्य जैसी कलाएँ व्यक्ति के भावनात्मक विकास को प्रोत्साहित करती थीं, जबकि युद्धकला और व्यायाम शारीरिक सुदृढ़ता प्रदान करते थे। मल्लयुद्ध भी एक कला थी।

चित्रकला, मूर्तिकला, पुष्पसज्जा, आभूषण निर्माण आदि कलाएँ भारतीय समाज के सौंदर्यबोध को दर्शाती हैं। इन कलाओं के माध्यम से व्यक्ति प्रकृति और जीवन के प्रति संवेदनशील बनता था।

संवाद कला, शिष्टाचार, अतिथि-सत्कार और लोकाचार से संबंधित कलाएँ समाज में नैतिकता और मर्यादा को स्थापित करती थीं। ये कलाएँ व्यक्ति को सामाजिक जीवन में संतुलन बनाए रखने की शिक्षा देती थीं। महिला- पुरुष द्वारा सुचारु रूप से वस्त्र एवं अलंकार पहनना कला थी।

पाककला, वस्त्र निर्माण, कृषि, पशुपालन - दुग्ध उद्यम जैसी कलाएँ दैनिक जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक थीं। सारथ्य कला थी। धातु से बर्तन बनाना कला थी । वास्तु कला प्रसिद्ध थी। रत्न, सुवर्ण इत्यादि की पहचान करना कला थी। इससे व्यक्ति आत्मनिर्भर बनता था, जो

भारतीय संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। अनेक रूप धारण कर लेना कला थी जिसका उपयोग हनुमानजी ने किया था।

योग-मुद्रा, ध्यान, मंत्रविद्या और ज्योतिष जैसी कलाएँ व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास में सहायक थीं। भारतीय संस्कृति में आत्मा और परमात्मा के संबंध को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है, और ये कलाएँ उसी दिशा में मार्गदर्शन करती थीं। लेखन भी एक कला है।

विविध मकरंद से आसव निकालने की कला थी। शल्य क्रिया भी कला थी।

भारत की प्राचीन वैमानिक कला थी। प्राचीनतम महर्षि भरद्वाज की रचना 'यंत्रसर्वस्व' जिससे पता चलता है उसका वैमानिक प्रकरण बोधानन्द् की बनाई हुई आवृत्ति है। वैमानिक प्रकरण से पता चलता है कि हमारे पूर्वज विमान शास्त्र में अत्यंत निपुण थे। वायरलेस व्हिडिओ भी उसके पास था। (लेखक - लज्जा राम तोमर)

प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति में विज्ञान और तकनीक का भी महत्त्वपूर्ण स्थान था। प्राचीन ग्रंथों में विमान तकनीक के उल्लेख मिलते हैं। रामायण में वर्णित पुष्पक विमान इसका प्रसिद्ध उदाहरण माना जाता है। यह विमान आकाश में उड़ने वाला और अनेक लोगों को ले जाने में सक्षम बताया गया है। महाभारत में भी आकाश मार्ग से चलने वाले यानों का उल्लेख मिलता है। प्राचीन भारतीय ग्रंथ विमानिका शास्त्र में विभिन्न प्रकार के विमानों और उनकी संरचना का वर्णन किया गया है। इन ग्रंथों में विमान निर्माण की धातुएँ, ऊर्जा स्रोत और संचालन विधियों का भी उल्लेख मिलता है। इससे यह संकेत मिलता है कि प्राचीन भारतीय विद्वानों को उड्डयन संबंधी कल्पनाओं और सिद्धांतों का ज्ञान था। गुरुकुल शिक्षा पद्धति में विज्ञान, गणित और खगोलशास्त्र के साथ ऐसे तकनीकी विचारों का भी अध्ययन कराया जाता था। इस प्रकार प्राचीन भारतीय शिक्षा केवल आध्यात्मिक ही नहीं बल्कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी समृद्ध थी।

प्राचीन भारत की 64 शिक्षा कलाएँ भारतीय संस्कृति के बहुआयामी स्वरूप को दर्शाती हैं। ये कलाएँ न केवल व्यक्ति के समग्र विकास का माध्यम थीं, बल्कि समाज में संतुलन, सौंदर्य और नैतिकता को भी स्थापित करती थीं। ये कलाएँ व्यक्ति के समग्र विकास, सामाजिक संतुलन और सांस्कृतिक समृद्धि का आधार थीं। आज आवश्यकता है कि हम इन कलाओं के मूल तत्त्वों को समझकर उन्हें आधुनिक शिक्षा प्रणाली में समाहित करें, ताकि एक संतुलित और सशक्त समाज का निर्माण किया जा सके।

गुरुकुल प्रणाली में विद्यार्थियों को इन कलाओं का प्रशिक्षण दिया जाता था। शिक्षा का उद्देश्य केवल विद्वान बनाना नहीं, बल्कि एक आदर्श नागरिक तैयार करना था। गुरु अपने शिष्यों को उनकी रुचि और क्षमता के अनुसार विभिन्न कलाओं में दक्ष बनाते थे।

प्राचीन भारत में महिलाओं को भी इन कलाओं में पारंगत होने का अवसर दिया जाता था। विशेष रूप से संगीत, नृत्य, चित्रकला और गृह प्रबंधन से संबंधित कलाएँ महिलाओं की शिक्षा का महत्त्वपूर्ण हिस्सा थीं। इससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज में महिलाओं की शिक्षा को भी महत्व दिया जाता था।

आज के युग में भी 64 कलाओं की प्रासंगिकता बनी हुई है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में 'स्किल बेस्ड एजुकेशन' पर जो जोर दिया जा रहा है, वह कहीं न कहीं प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली से प्रेरित है।

जैसे -

- संचार कौशल (Communication Skills)
- रचनात्मक कला (Creative Arts)
- जीवन कौशल (Life Skills)
- भावनात्मक बुद्धिमत्ता (Emotional Intelligence)

ये सभी आधुनिक अवधारणाएँ 64 कलाओं में पहले से ही विद्यमान थीं। डॉ. आलतेकर के अनुसार उपनिषद काल मे भारत मे साक्षरता 80 प्रतिशत थी।

निष्कर्ष

प्राचीन भारत की 64 शिक्षा कलाएँ भारतीय संस्कृति के बहुआयामी स्वरूप को दर्शाती हैं। ये कलाएँ न केवल व्यक्ति के समग्र विकास का माध्यम थीं, बल्कि समाज में संतुलन, सौंदर्य और नैतिकता को भी स्थापित करती थीं। ये कलाएँ व्यक्ति के समग्र विकास, सामाजिक संतुलन और सांस्कृतिक समृद्धि का आधार थीं।

आज आवश्यकता है कि हम इन कलाओं के मूल तत्त्वों को समझकर उन्हें आधुनिक शिक्षा प्रणाली में समाहित करें, ताकि एक संतुलित और सशक्त समाज का निर्माण किया जा सके। ❑

भारतीय ज्ञान परम्परा एवं राष्ट्रवाद

डॉ. नरेश कुमार वर्मा
सहायक आचार्य,
राष्ट्रीय सुरक्षा विशिष्ट अध्ययन केन्द्र, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

भारतीय ज्ञान परंपरा में राष्ट्रवाद की अवधारणा अत्यंत प्राचीन है, जो भौगोलिक एकता, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समरसता और आध्यात्मिक चिंतन पर आधारित है। भारत के प्राचीन साहित्य मुख्यतः वेदों, पुराणों और महाकाव्यों में मातृभूमि के प्रति प्रेम, समर्पण और रक्षा की भावना को राष्ट्रवाद का मूल आधार माना गया है। भारतीय दर्शनशास्त्र में, राष्ट्रवाद की अवधारणा को एक समावेशी समाज एवं राष्ट्र के रूप में दर्शाया गया है। भारतीय राष्ट्रवाद का विचार-पश्चिमी देशों के राष्ट्रवाद की अवधारणा के विपरीत है क्योंकि पाश्चात्य विचारधारा राष्ट्र को केवल भौगोलिक सीमाओं तक ही सीमित रखता है जोकि केवल एक भौतिकतावादी संकल्पना है। जबकि भारतीय विचार, राष्ट्र को एक सांस्कृतिक,आध्यात्मिक, दार्शनिक एवं समग्र अवधारणा मानते हुए एक जीवंत और सतत चलने वाली प्रक्रिया है। भारतीय दर्शन में राष्ट्र एक जीवंत अवधारणा है, जिसे मातृभूमि या 'माँ' के रूप में देखा जाता रहा है।

प्राचीन काल से ही, भारत में राष्ट्र की अवधारणा एक आध्यात्मिक एवं भावनात्मक पहचान के रूप में विद्यमान रही है। भारत के ही नहीं बल्कि विश्व के सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद (रचना का समय लगभग 1500 से 1000 ईसा पूर्व) में, 'राष्ट्रम्' शब्द का प्रयोग उस राष्ट्रीय पहचान का वर्णन करने के लिए किया गया है, जो भारतवर्ष के नाम से जाना जाने वाला एक भूभाग है और वहाँ के निवासियों की मूल पहचान है। 'राष्ट्रम्' राष्ट्रत्व की एक विशिष्ट संप्रभु भारतीय अवधारणा का प्रतिनिधित्व करता है, जो मूल रूप से आध्यात्मिक आधारों पर टिकी है। इस प्रकार, एक विचार के रूप में, 'राष्ट्रम्' एक ऐसी अवधारणा है जिसकी विशेषता एकीकरण और विकासात्मक प्रगति (अभ्युदयम्) है।

संगच्छध्वं संवदध्वं
सं वो मनांमेंसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे
संजानाना उपासते॥
समानो मन्त्रः समितिः
समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये
वः समानेन वो हविषा जुहोमि॥
समानी वा आकूतिः
समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो
यथा वः सुसहासति॥

– ऋग्वेद (10.191)

इस श्लोक मंत्र के माध्यम से राष्ट्रवाद की मूल भावना को एकता, सामूहिकता और समान चिंतन के रूप में प्रस्तुत किया गया। यह मंत्र लोगों को साथ चलने, मिलकर विचार करने और एक समान लक्ष्य की ओर अग्रसर होने का संदेश देता है, जो किसी भी सुदृढ़ राष्ट्र की

आधारशिला है। इसमें व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर सामूहिक हित को प्राथमिकता देने की प्रेरणा मिलती है, जिससे सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता मजबूत होती है। इस प्रकार, ऋग्वेद का यह सिद्धांत राष्ट्रवाद को सहयोग, सहभागिता और साझा चेतना पर आधारित एक जीवंत भावना के रूप में स्थापित करता है। इसके विपरीत, यूरोपीय देशों में राष्ट्र, राष्ट्रवाद और राष्ट्रीयता की संकल्पना मुख्यत: 1648 की वेस्टफेलिया की संधि के उपरांत राष्ट्र-राज्य एवं सम्प्रभुता जैसे शब्दों का बीजारोपण हुआ, उसकी संकल्पना एवं अवधारणा तो पाश्चात्य विचारों में बहुत समय तक 'एक दूर की कोड़ी' थी।

अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में राष्ट्रवाद की भावना अत्यंत गहन और आध्यात्मिक रूप में व्यक्त की गई है। 'माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या:' के माध्यम से मनुष्य और मातृभूमि के बीच संबंध को माता-पुत्र के समान बताया गया है, जिससे राष्ट्र के प्रति स्वाभाविक प्रेम, सम्मान और समर्पण की भावना उत्पन्न होती है। यह सूक्त राष्ट्र को केवल एक भौगोलिक सीमा नहीं, बल्कि एक जीवंत और पूजनीय भाव के रूप में देखता है, जिसके प्रति प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य उसकी रक्षा, उन्नति और सम्मान करना है। इस प्रकार, पृथ्वी सूक्त राष्ट्रवाद को भावनात्मक, नैतिक और आध्यात्मिक आधार प्रदान करता है, जो राष्ट्रीय एकता और देशभक्ति को सुदृढ़ बनाता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में राष्ट्रवाद भौगोलिक राष्ट्र से ऊपर उठकर सांस्कृतिक राष्ट्र की बात करता है, जो सामाजिक एकीकरण और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' (सभी सुखी हों) के ध्येय पर आधारित है एवं विश्व शांति की बात करता है जोकि आज के इस भौतिकतावादी विश्व में अत्यंत आवश्यक है इसीलिए कई महापुरुषों ने वेदों के ज्ञान पर लौटने की वक़ालत की है जिसके माध्यम से पुरे राष्ट्र ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व को संगठित किया जा सकता है इसलिए भारतीय ज्ञान परंपरा ही वैश्विक शांति एवं स्थायित्व का भविष्य है।

विष्णु पुराण (2.3.1) में भारत की भौगोलिक परिभाषा केवल सीमाओं का वर्णन नहीं करती, बल्कि यह राष्ट्रवाद की आधारभूमि भी प्रस्तुत करती है। 'उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्...' श्लोक के माध्यम से भारतवर्ष को एक निश्चित भू-क्षेत्र के रूप में पहचान दी गई, जिससे लोगों में साझा भूमि के प्रति एकता और अपनत्व की भावना विकसित होने में सहायक हुई। इस प्रकार, यह श्लोक स्पष्ट करता है कि भारत प्राचीन काल से ही केवल भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि सांस्कृतिक रूप से एक संगठित राष्ट्र रहा है।

वाल्मीकि रामायण में प्रभु श्रीराम ने कहा था 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' राष्ट्रवाद की उच्चतम भावना को अभिव्यक्त करता है। इस वाक्य के माध्यम से मातृभूमि को स्वर्ग से भी श्रेष्ठ बताया गया है, जो नि:स्वार्थ प्रेम और मातृभूमि के प्रति सर्वोच्च देशभक्ति को दर्शाता है। यह वाक्य हमें सिखाता है कि माँ का स्थान और देशप्रेम सभी सुखों से श्रेष्ठ है। यह केवल भावनात्मक जुड़ाव नहीं, बल्कि राष्ट्र के लिए त्याग और कर्तव्य निभाने की प्रेरणा भी देता है।

महाभारत में राष्ट्रवाद की भावना धर्म, सुरक्षा एवं लोककल्याण के सिद्धांतों पर आधारित है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि राष्ट्र की रक्षा, धर्म की स्थापना और प्रजा के कल्याण ही राजा एवं नागरिकों का प्राथमिक कर्तव्य होना चाहिए। यह विचार राष्ट्रवाद को केवल भावनात्मक लगाव तक ही सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे कर्तव्यपरक और नैतिक आधार प्रदान करता है। जब शासक न्यायपूर्ण शासन करता है और नागरिक अपने दायित्वों का पालन करते हैं, तब राष्ट्र सुदृढ़ और समृद्ध बनता है। इस प्रकार, महाभारत राष्ट्रवाद को एक ऐसी व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत करता है, जहाँ व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठकर सामूहिक हित, न्याय एवं सुरक्षा को महत्त्वपूर्ण माना गया है। इन प्राचीन ग्रंथों

में राष्ट्रवाद का स्वरूप केवल राजनीतिक सीमाओं तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के रूप में विकसित होता है। इसमें राष्ट्र को एक जीवंत सांस्कृतिक इकाई माना गया है जिसमें संसार भी समाहित है।

महा उपनिषद के छठे अध्याय, श्लोक 71-73 में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का विस्तृत वर्णन किया गया है। 'वसुधैव कुटुंबकम्' के माध्यम से विश्व को एक परिवार के रूप में देखने की दृष्टि मिलती है। यह विचार विविधता में एकता को सशक्त बनाता है और विभिन्न भाषाओं, परंपराओं तथा मान्यताओं के बावजूद एक साझा सांस्कृतिक पहचान स्थापित करता है। साथ ही, धर्म अर्थात न्याय पर आधारित समाज व्यवस्था पर राष्ट्र के नैतिक मूल्यों को मजबूती प्रदान करता है, जिससे समाज में संतुलन, न्याय और समरसता का स्थायित्व रहता है। इस प्रकार, भारतीय ज्ञान परंपरा में राष्ट्रवाद एक व्यापक, समावेशी और मूल्य-आधारित अवधारणा है, जो सांस्कृतिक एकता, नैतिक कर्तव्यों एवं वैश्विक बंधुत्व को जोड़कर राष्ट्र को सुदृढ़ बनाती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा से ही प्रेरणा पाकर आधुनिक महानुभावों ने राष्ट्रवाद पर अपने विचारों का प्रतिपादन किया मुख्यत: बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद पर अपने विचार रखते हुए राष्ट्र गीत 'वंदे मातरम्' की रचना की जोकि भारतीय स्वाधीनता संग्राम की आधारशिला बना। उन्होंने मातृभूमि को देवी के रूप में प्रस्तुत किया, जिससे राष्ट्रवाद में भावनात्मक और आध्यात्मिक ऊर्जा का संचार हुआ। स्वामी विवेकानंद ने 'आध्यात्मिक राष्ट्रवाद' के माध्यम से राष्ट्रवाद को धर्म (कर्तव्य) के रूप में देखा। उनका मानना था कि भारत को अपने आध्यात्मिक ज्ञान से विश्व का मार्गदर्शन करना चाहिए और भारत का उत्थान ही राष्ट्रवाद का चरम लक्ष्य है। वहीं महात्मा गाँधी के लिए राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं, बल्कि 'स्वराज्य' (आत्म-शासन) और 'आत्मनिर्भरता' (स्वदेशी) था। यह सत्य और अहिंसा पर आधारित था।

छत्रपति शिवाजी महाराज का राष्ट्रवाद आधुनिक राष्ट्रवाद से भिन्न, मुख्य रूप से 'हिंदवी स्वराज्य' की भावना पर आधारित था, जिसका अर्थ था विदेशी मुगल और बीजापुरी शासन से मुक्ति और एक आत्मनिर्भर राज्य की स्थापना। उनका राष्ट्रवाद धर्म-आधारित स्वतंत्रता, क्षेत्रीय स्वाभिमान और सांस्कृतिक सुरक्षा के इर्द-गिर्द केंद्रित था। दीनदयाल उपाध्याय जी ने राष्ट्र को केवल जमीन का टुकड़ा नहीं, बल्कि एक 'चिति' (आत्मा) माना। राष्ट्र की संस्कृति ही उसकी आत्मा है और राष्ट्रवाद इस चिति के अनुकूल आचरण करना है, न कि पश्चिमी अवधारणा की तरह राज्य और राष्ट्र को एक समझना। सांस्कृतिक पुनर्जागरण पर बिपिन चंद्र पाल ने 'द सोल ऑफ इंडिया' में भारतीय राष्ट्रवाद की पहचान को सांस्कृतिक स्वतंत्रता के रूप में स्थापित किया। उन्होंने बताया कि राष्ट्रवाद का मतलब देश की अपनी ज्ञान परंपरा और मूल्यों को पुनर्जीवित करना है। रवींद्रनाथ टैगोर ने विश्व बंधुत्व पर आधारित राष्ट्रवाद की बात की, यह राष्ट्रवाद स्वराज्य, आत्मनिर्भरता और 'सा विद्या या विमुक्तये' (ज्ञान द्वारा मुक्ति) के आदर्शों से प्रेरित था। टैगोर ने राष्ट्रवाद को संकीर्णता से ऊपर उठाकर 'अंतर्राष्ट्रीयतावाद' और मानवतावाद से जोड़ा जोकि 'वसुधैव कुटुम्बकम्' से ही प्रेरित है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में राष्ट्रवाद भौगोलिक राष्ट्र से ऊपर उठकर सांस्कृतिक राष्ट्र की बात करता है, जो सामाजिक एकीकरण और 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' (सभी सुखी हों) के ध्येय पर आधारित है एवं विश्व शांति की बात करता है जोकि आज के इस भौतिकतावादी विश्व में अत्यंत आवश्यक है। इसीलिए कई महापुरुषों ने वेदों के ज्ञान पर लौटने की वक़ालत की है जिसके माध्यम से पूरे राष्ट्र ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व को संगठित किया जा सकता है इसलिए भारतीय ज्ञान परंपरा ही वैश्विक शांति एवं स्थायित्व का भविष्य है। ❑

स्वदेशी ऊर्जा और आत्मनिर्भर भारतीय ग्राम

बलकार सिंह पूनियाँ
सहायक प्रोफेसर
ग्रामीण विकास विभाग,
इग्नू, नई दिल्ली

इतिहास बार-बार यह संकेत देता है कि विकास की चकाचौंध हमेशा स्थायित्व की गारंटी नहीं होती। आधुनिक शहरों ने सुविधाओं, तकनीक और अवसरों का विस्तार तो किया है, लेकिन हर बड़े संकट-चाहे वह महामारी हो या वैश्विक ऊर्जा संकट की इन स्थितियों के दौरान उनकी सीमाएँ उजागर होती रही हैं।

इसके विपरीत, भारतीय गाँव, जिन्हें लंबे समय तक पिछड़ेपन का प्रतीक मान लिया गया, वास्तव में संकट के समय अपनी जीवटता, सामुदायिक शक्ति और आत्मनिर्भरता के कारण अधिक टिकाऊ साबित हुए हैं। कोविड-19 महामारी के दौरान जब महानगर ठहर गए, रोजगार समाप्त हो गए और जीवन असुरक्षित हो गया, तब लाखों लोगों का गाँवों की ओर पलायन इस सच्चाई का प्रत्यक्ष प्रमाण बनकर सामने आया कि केवल भौतिक सुविधाएँ जीवन की स्थिरता सुनिश्चित नहीं कर सकतीं।

शहरी निर्भरता बनाम ग्रामीण स्वावलंबन

शहरों की जीवन-शैली बाजार और बाहरी संसाधनों पर अत्यधिक निर्भर है, जबकि गाँवों में आज भी संसाधनों की विविधता, सामाजिक सहयोग और प्रकृति के साथ संतुलित संबंध मौजूद हैं, जो संकट के समय सुरक्षा कवच का कार्य करते हैं।

आज उभरता गैस संकट भी इसी असंतुलित विकास मॉडल की ओर संकेत करता है, जहाँ बढ़ती कीमतें और अनिश्चित आपूर्ति आम जीवन को अस्थिर बना रही हैं। ऐसे समय में यह स्पष्ट होता जा रहा है कि स्थायी समाधान बाहरी निर्भरता में नहीं, बल्कि स्थानीय संसाधनों और विकेन्द्रीकृत व्यवस्थाओं में निहित है।

बायोगैस : ऊर्जा के साथ कृषि का सशक्त आधार

ऊर्जा आत्मनिर्भरता की दिशा में बायोगैस एक समग्र और टिकाऊ समाधान के रूप में उभरता है। पशुओं के गोबर, कृषि अवशेष और अन्य जैविक कचरे से गैस उत्पन्न करने की प्रक्रिया 'वेस्ट-टू-वेल्थ' और 'फार्म-टू-फ्यूल' की अवधारणा को व्यावहारिक रूप देती है।

इसका सबसे बड़ा लाभ कृषि क्षेत्र को प्राप्त होता है। बायोगैस संयंत्र से निकलने वाला अवशेष (स्लरी) अत्यंत गुणवत्तापूर्ण जैविक खाद के रूप में खेतों में उपयोग किया जाता है, जिससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है, रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता घटती है और खेती की लागत कम होती है। इससे किसानों की आय में वृद्धि होती है और प्राकृतिक खेती को बढ़ावा मिलता है।

बंदरकोला गांव और कृषि-ऊर्जा संतुलन

मध्य प्रदेश के जबलपुर जिले के बंदरकोला गाँव का उदाहरण यह सिद्ध करता

 ISSN 2581-4133

है कि ऊर्जा आत्मनिर्भरता केवल घरेलू उपयोग तक सीमित नहीं, बल्कि कृषि को भी सशक्त बनाती है।

जहाँ लगभग 75 प्रतिशत घरों में गोबर गैस का उपयोग होता है, वहीं उससे प्राप्त जैविक खाद का उपयोग खेतों में किया जाता है, जिससे उत्पादन में सुधार और लागत में कमी देखी गई है। इस प्रकार यह मॉडल ऊर्जा और कृषि दोनों क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता स्थापित करता है।

नवाचार : कचरे से ऊर्जा और संसाधनों का पुनर्चक्रण

पुणे के इंजीनियर प्रियदर्शन सहस्रबुद्धे का प्रयोग यह दर्शाता है कि रसोई का कचरा भी ऊर्जा का स्रोत बन सकता है। यह मॉडल ग्रामीण क्षेत्रों में भी अपनाया जा सकता है, जहां जैविक कचरे की उपलब्धता अधिक होती है।

इससे न केवल ऊर्जा उत्पादन होता है, बल्कि स्वच्छता और कचरा प्रबंधन की समस्या का भी समाधान होता है।

पंचायत स्तर पर ऊर्जा प्रबंधन की भूमिका

यदि बायोगैस और सौर ऊर्जा जैसे मॉडल को पंचायत स्तर पर संगठित रूप से लागू किया जाए, तो यह ऊर्जा आत्मनिर्भरता को व्यापक रूप दे सकता है।

पंचायती राज संस्थाएँ स्थानीय संसाधनों की पहचान, योजना निर्माण और क्रियान्वयन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। ग्राम पंचायतें सामुदायिक बायोगैस संयंत्र स्थापित कर सकती हैं, जिनसे पूरे गाँव को ऊर्जा उपलब्ध कराई जा सकती है।

इसके साथ ही, पंचायतें प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित कर सकती हैं, जिससे ग्रामीणों को इन तकनीकों का ज्ञान प्राप्त हो और वे स्वयं इनके संचालन में सक्षम बनें।

स्वयं सहायता समूह (SHG) और महिलाओं की भूमिका

ग्रामीण महिलाओं के स्वयं सहायता समूह इस परिवर्तन की सबसे महत्त्वपूर्ण कड़ी बन सकते हैं।

महिलाएँ घरेलू ऊर्जा उपयोग का केंद्र होती हैं, इसलिए यदि उन्हें बायोगैस, सौर ऊर्जा और अन्य स्वदेशी तकनीकों का प्रशिक्षण दिया जाए, तो वे न केवल अपने परिवार की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा कर सकती हैं, बल्कि सामुदायिक स्तर पर ऊर्जा प्रबंधन में भी सक्रिय भूमिका निभा सकती हैं।

स्वयं सहायता समूह बायोगैस संयंत्रों के संचालन, रखरखाव और प्रबंधन का कार्य संभाल सकते हैं। इससे महिलाओं को रोजगार के अवसर मिलते हैं और वे 'ऊर्जा उद्यमी' के रूप में उभर सकती हैं।

सौर ऊर्जा : विकेन्द्रीकृत कृषि और जल प्रबंधन में सहायक

सौर ऊर्जा गाँवों के लिए अत्यंत उपयोगी विकल्प है। सौर ऊर्जा का उपयोग कृषि के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध हो सकता है। सोलर पंप के माध्यम से सिंचाई की सुविधा प्राप्त होती है, जिससे किसानों को डीजल या बिजली पर निर्भर नहीं रहना पड़ता। माइक्रो-ग्रिड और सोलर पैनल के माध्यम से गाँवों में ऊर्जा की निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकती है, जिससे कृषि कार्यों में बाधा नहीं आती और उत्पादन स्थिर बना रहता है।

> ऊर्जा आत्मनिर्भरता की दिशा में बायोगैस एक समग्र और टिकाऊ समाधान के रूप में उभरा है। पशुओं के गोबर, कृषि अवशेष और अन्य जैविक कचरे से गैस उत्पन्न करने की प्रक्रिया 'वेस्ट-टू-वेल्थ' और 'फार्म-टू-फ्यूल' की अवधारणा को व्यावहारिक रूप देती है। इसका सबसे बड़ा लाभ कृषि क्षेत्र को प्राप्त होता है। बायोगैस संयंत्र से निकलने वाला अवशेष (स्लरी) अत्यंत गुणवत्तापूर्ण जैविक खाद के रूप में खेतों में उपयोग किया जाता है, जिससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है, रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता घटती है और खेती की लागत कम होती है।

एथनॉल : कृषि आधारित ऊर्जा का भविष्य

एथनॉल आधारित कुकिंग स्टोव भविष्य में ऊर्जा का एक महत्त्वपूर्ण स्वदेशी विकल्प बन सकते हैं। एथनॉल का उत्पादन गन्ना और अन्य कृषि उत्पादों से किया जाता है, जिससे किसानों को सीधा लाभ मिलता है।

इस प्रकार एथनॉल ऊर्जा और कृषि के बीच एक मजबूत संबंध स्थापित करता है, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नई दिशा मिलती है।

स्वदेशी जीवन-दर्शन और समग्र विकास

गाँव केवल ऊर्जा का विकल्प नहीं, बल्कि एक समग्र जीवन-दर्शन प्रस्तुत करते हैं। यहाँ संसाधनों का पुनर्चक्रण, प्रकृति के साथ संतुलन और सामुदायिक सहयोग जीवन का आधार हैं।

'कल्चर इज इकॉनमी' की अवधारणा इसी संदर्भ में महत्त्वपूर्ण है, जहाँ संस्कृति और अर्थव्यवस्था एक-दूसरे की पूरक बनती हैं।

निष्कर्ष : स्वदेशी, महिलाओं की भूमिका, पंचायत और कृषि आधारित आत्मनिर्भर भारत। यह स्पष्ट होता जा रहा है कि ऊर्जा संकट का समाधान केवल तकनीकी नहीं, बल्कि संरचनात्मक और सामाजिक परिवर्तन में निहित है।

यदि गाँवों की आत्मनिर्भरता, पंचायती राज की सशक्त भूमिका, महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों की भागीदारी और कृषि आधारित ऊर्जा मॉडल को एक साथ जोड़ा जाए, तो एक सुदृढ़, संतुलित और टिकाऊ विकास प्रणाली का निर्माण किया जा सकता है।

इसलिए 'देखो और चलो गाँवों की ओर' केवल नारा नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक और आवश्यक विकास रणनीति है, जो भारत को आत्मनिर्भर, सक्षम और संकट-प्रतिरोधी बना सकती है। ❑

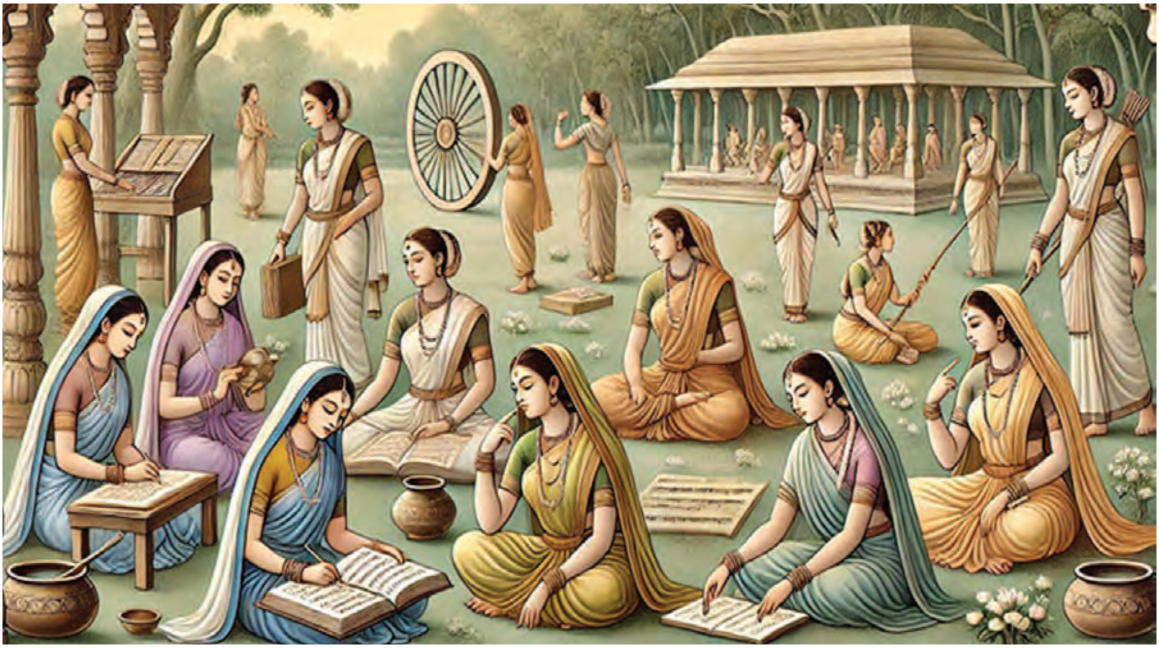

भारतीय शिक्षा और संस्कृति का महत्त्व

डॉ. शीतल राकेश डुम्बेरे
सहायक प्रोफेसर,
श्री साई शिक्षण महाविद्यालय, चंद्रपुर,
महाराष्ट्र

भारत की शैक्षिक और सांस्कृतिक परंपराएँ एक ऐसी विरासत हैं जो हज़ारों सालों तक फैली हुई हैं। पुरानी गुरुकुल प्रणाली और नालंदा और तक्षशिला विश्वविद्यालय की दार्शनिक बुनियाद से लेकर, साम्राज्यवादी विरासतें और राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) में समाहित होने वाले आज़ादी के बाद के सुधारों तक, भारतीय संस्कृति और शिक्षा के बीच के तालमेल ने पहचान, मूल्यों, सामाजिक मेलजोल और ज्ञानप्रणाली को आकार दिया है। वर्तमान में ऐतिहासिक, दार्शनिक, शिक्षा-विषयक और नीति के नज़रिए से भारतीय शिक्षा और संस्कृति का महत्त्व बढ़ा है। स्वदेशी ज्ञान प्रणालियाँ, संस्कृति मूल्य, भाषाएँ, रीति-रिवाज, कलाएँ और सामाजिक संस्थाएँ पूरी तरह से सीखने और समाज की लगातार तरक्की में योगदान देती हैं। औपनिवेशिक बाधा, विश्वव्यापीकरण, मानकीकरण का दबाव, भाषा का नुकसान, संसाधन में असमानता और आज की माँगों के साथ तालमेल न होने जैसी चुनौतियों पर भी ध्यान दिया गया है। आज संस्कृति को पाठ्यक्रम में शामिल करने, शिक्षक शिक्षा को मज़बूत करने, बहुभाष्यता को स्वीकार करने और आज की ज़रूरतों के हिसाब से ढलते हुए भारत की शैक्षिक विरासत को बनाए रखने के लिए समुदाय की भागीदारी को बढ़ावा देने का भी महत्त्व बढ़ा है।

किसी भी समाज में शिक्षा और संस्कृति को अलग नहीं किया जा सकता। भारत में, शिक्षा का मतलब सिर्फ़ तकनीकी कौशल या असल जानकारी देना कभी नहीं रहा; यह हमेशा संस्कृति से जुड़ी रही है – विश्वास, रीति-रिवाज, कला, सामाजिक मूल्य, भाषाएँ और दुनिया को देखने का नज़रिया। जैसे-जैसे भारत 21वीं सदी में वैश्वीकरण, डिजिटलीकरण और सामाजिक बदलाव का सामना करते हुए आगे बढ़ रहा है, इस बात में नई दिलचस्पी बढ़ रही है कि भारतीय शिक्षा और संस्कृति एक-दूसरे की विरासत को बचाने, मूल्यों को बढ़ावा देने और पूरी तरह से विकास को बढ़ावा देने के लिए कैसे जानकारी दे सकते हैं। इस लेख का उद्देश्य भारतीय शिक्षा और संस्कृति के महत्त्व को समझना है – हर एक दूसरे में क्या योगदान देता है, वे कैसे एक साथ विकसित हुए हैं, और मौजूदा हकीकतें और चुनौतियाँ क्या हैं। इतिहास, दर्शन,आधुनिक नीति, फायदे और सीमाओं पर इस अनुभागों के माध्यम से, सुझावों के ज़रिए, यह तर्क दिया गया है कि संस्कृति को शिक्षा में शामिल करने से सीखने वाले और समाज दोनों बेहतर होते हैं।

प्राचीन शिक्षा और संस्कृति

प्राचीन भारत में, शिक्षा सिर्फ़ तालीम नहीं थी बल्कि ज़िंदगी जीने का एक तरीका थी। गुरुकुल प्रणाली, जहाँ छात्र अपने शिक्षक (गुरु) के साथ रहते थे, न सिर्फ़ धर्मग्रंथ, दर्शनशास्त्र, अंकगणित, खगोल-विज्ञान सीखते थे, बल्कि तौर-तरीके, अनुशासन, नैतिकता, कला और समाज की ज़िम्मेदारियाँ भी सीखते थे, यह प्रणाली बहुत ज़रूरी है। नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला और बाद के

संस्थान जैसे केंद्र न सिर्फ़ शिक्षण केंद्र के तौर पर काम करते थे, बल्कि पूरे एशिया से छात्रों को लाने वाले सांस्कृतिक मिश्रण के लिए भी जाने जाते थे। इन केंद्र में न सिर्फ़ शैक्षणिक विषय सिखाए जाते थे, बल्कि दर्शनशास्त्र, तर्कशास्त्र, भाषाएँ (संस्कृत, पाली), वैद्यक-शास्त्र (आयुर्वेद), कला और नैतिक मूल्य भी सिखाए जाते थे। संस्कृति, रीति-रिवाज, आध्यात्मिक जीवन और समाज का मेलजोल पढ़ाई के अनुभव का हिस्सा थे।

दर्शन और मूल्यों का प्रभाव

भारतीय संस्कृति में धर्म (कर्तव्य, धार्मिकता), कर्म, अहिंसा (Non-violence), सत्य (सच), सेवा (Service), वगैरह जैसे अवधारणा शामिल हैं। कई भारतीय परंपराओं में शिक्षा सिर्फ़ ज्ञान जमा करने का नाम नहीं रही है, बल्कि चरित्र बनाने का काम कर रही है : स्व: अनुशासन, सम्मान, विनम्रता, समाज की सेवा और नैतिक व्यवहार। इन मूल्यों ने आपसी रिश्तों, सामाजिक व्यवस्था और व्यक्ति और दुनिया के बीच के कड़ी को नियंत्रित किया।

औपनिवेशिक प्रभाव और बदलाव

ब्रिटिश उपनिवेशी राज के आने के साथ, भारतीय शिक्षा प्रणाली में बड़े बदलाव हुए। उपनिवेशी शिक्षा में इंग्लिश, नया पाठ्यक्रम, परीक्षा प्रणालियाँ और स्कूलिंग के नये प्रबंधकीय और नौकरशाही तरीके आए। पारंपरिक संस्थात्मक समर्थन खत्म हो गया; भारतीय ज्ञान प्रणाली को बेकार या पिछड़ा हुआ माना जाने लगा। पश्चिमी प्रतिरूप के लिए सांस्कृतिक मूल्यों, भाषाओं और स्थानीय प्रथाओं को किनारे कर दिया गया। हालांकि आधुनिकीकरण, वैश्विक विज्ञान, साहित्य वगैरह से जान-पहचान के मामले में फायदे हुए, लेकिन इसकी कीमत में स्थानीय प्रथाएँ का खत्म होना, भाषा का हटना, पारंपरिक पढ़ाने के तरीकों का खत्म होना और सामाजिक स्तरीकरण शामिल थे।

आज़ादी के बाद के सुधार और नीतियाँ

1947 में भारत की आज़ादी के बाद, कई कमीशन और कमेटियों (जैसे राधाकृष्णन, मुदलियार, कोठारी) ने आधुनिकीकरण और सांस्कृतिक पहचान को बचाने के बीच संतुलन बनाने की कोशिश की। राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने शिक्षा में भारतीय भाषाओं, कला, संस्कृति और मूल्यों को बढ़ावा देने की कोशिश की। हाल के दिनों में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 एक मील का पत्थर है, जो भारतीय ज्ञान प्रणाली (IKS) पर खास तौर पर ज़ोर देती है, उन्हें मुख्य धारा के पाठ्यक्रम में शामिल करती है, बहुभाष्यता, समग्र विकास, नैतिक मूल्य, कला और व्यावसायिक शिक्षा को बढ़ावा देती है, रटने की आदत को कम करती है। शोध से पता चलता है कि NEP 2020 शिक्षा को ज़्यादा समावेशी, सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील और मूल्य आधारित बनाने के लिए बदलाव का दस्तावेज है।

राष्ट्रीय ज्ञान प्रणालियाँ (IKS) और सांस्कृतिक आयाम

भारतीय ज्ञान प्रणाली क्या है - IKS का मतलब है भारतीय समुदायों द्वारा पीढ़ियों से विकसित किया गया ज्ञान, रीति-रिवाज, विश्वास, मूल्य और सीखने के तरीके। इसमें औषधीय पौधों, पारंपरिक पारिस्थितिक प्रथाएँ, खेती के तरीकों, कला, शिल्प, रीति-रिवाजों, भाषाओं, लोककथाओं, कला प्रदर्शन, वास्तुकला आदि का ज्ञान शामिल है। ऐसा ज्ञान अक्सर प्रसंग-संवेदी, जगह पर आधारित, टिकाऊ और समग्र होता है।

> भारत के समक्ष एक तरफ वैश्वीकरण की चुनौतियाँ, आर्थिक दबाव और आधुनिक शिक्षा की माँगें हैं; दूसरी तरफ इसकी पुरानी सांस्कृतिक विरासत, भारतीय ज्ञान प्रणाली और मूल्य परंपराएँ हैं जिन्होंने सदियों से न सिर्फ़ ज्ञान दिया बल्कि पूरी तरक्की, पहचान, नैतिक आधार और सामाजिक एकता भी दी है। भारतीय शिक्षा और संस्कृति का महत्त्व बहुत ज़्यादा है : संस्कृति शिक्षा को बेहतर बनाती है, काम का आधार देती है, पहचान, नैतिकता और टिकाऊ तरीकों को बढ़ावा देती है, जबकि शिक्षा संस्कृति को बदलते समय में ज़िंदा रहने, ढलने और फलने-फूलने का ज़रिया देती है।

सांस्कृतिक मूल्य, रीति-रिवाज और संस्कार

भारतीय संस्कृति में रीति-रिवाज, कहानियाँ, संगीत, नृत्य, त्योहार, कहानी सुनाना, संस्कार (सांस्कृतिक रीति-रिवाज) पर ज़ोर दिया जाता है, जो सिर्फ़ मनोरंजन ही नहीं करते बल्कि मूल्य भी सिखाते हैं : बड़ों का सम्मान, सामुदायिक बंधन, प्रकृति के साथ तालमेल, नैतिक व्यवहार आदि पर जोर दिया गया है।

शिक्षा में संस्कृति को शामिल करने के लाभ:

पहचान और सांस्कृतिक समुदाय

संस्कृति पहचान का एहसास कराती है। भारत जैसे मिश्रित समाज में, प्रादेशिक भाषाओं, स्थानीय कला और इतिहास का सम्मान करने और उन्हें बचाने से छात्रों को जुड़ाव महसूस होता है, आत्म-सम्मान बढ़ता है, अकेलापन कम होता है और अपनापन बढ़ता है।

मूल्य और नैतिकता

ईमानदारी, अहिंसा, कर्तव्य, पर्यावरण की ज़िम्मेदारी जैसे नैतिक मूल्य भारतीय परंपरा में गहराई से जुड़े हुए हैं। इनसे जुड़ी शिक्षा चरित्र के विकास और सामाजिक ज़िम्मेदारी को बढ़ावा देती है।

समग्र शिक्षा

भारतीय संस्कृति और ज्ञान प्रणाली समग्र शिक्षा को बढ़ावा देते हैं - संज्ञानात्मक, भावनात्मक, आध्यात्मिक, भौतिक, योग, ध्यान, कला, संगीत और रीति-रिवाज़ जैसी शिक्षा मानसिक स्वास्थ्य रचनात्मकता, भावनात्मक विनियमन में मदद करती हैं।

संज्ञानात्मक और शैक्षणिक लाभ

कई देसी पढ़ाने के तरीके अनुभवात्मक,

मौखिक, संदर्भ-आधारित होते हैं, और सहभागी अधिगम को बढ़ावा देते हैं। ये छात्रों को ठोस, स्थानीय उदाहरणों के अमूर्त अवधारणाओं को समझने में मदद कर सकते हैं। वे कई तरह के विश्वदृष्टिकोण दिखाकर तार्किक सोच को भी बढ़ावा देते हैं।

स्थायित्व और स्थानीय उपयोगिता

IKS में अक्सर टिकाऊ प्रथाएँ (कृषि, पर्यावरण, पारिस्थितिकी) शामिल होती हैं जो मौसमी बदलाव के अनुरूप हैं। स्थानीय ज्ञान का इस्तेमाल करके शिक्षा को छात्रों के जीवन के लिए सीधे तौर पर उपयोगी बनाया जा सकता है।

चुनौतियाँ और समाधान

संस्कृति और शिक्षा के मेल के कई फ़ायदे हैं, लेकिन कई चुनौतियाँ भी हैं :

- **मानकीकरण या स्थानीयकरण :** आधुनिक शिक्षा में अक्सर मानकीकृत परीक्षण, एक जैसा पाठ्यक्रम और विश्वव्यापी मानदंड की ज़रूरत होती है, जो संस्कृति या ज्ञान में क्षेत्रीय/स्थानीय विविधता की इजाज़त नहीं दे सकते।
- **भाषा की रुकावटें :** कई भारतीय बच्चे घर पर स्थानीय भाषाएँ बोलते हैं; दूसरी भाषा में पढ़ाई से समझ और सांस्कृतिक जुड़ाव कम होता है। इसके उलट, कई क्षेत्रीय/स्थानीय भाषाओं में पढ़ाने का साधन न होने से संस्कृति को जोड़ने में रुकावट आती है।
- **शिक्षक प्रशिक्षण :** शिक्षकों को अक्सर भारतीय ज्ञान प्रणाली या संस्कृति-संबंधी अध्यापन के तरीकों का प्रशिक्षण नहीं मिलता। उनकी अपनी पढ़ाई स्थानीय रीति-रिवाज से कटी हुई हो सकती है।
- **संसाधनों की कमी :** ग्रामीण और पिछड़े इलाकों में सांस्कृतिक उत्सव (कला, संगीत, शिल्प, वगैरह) चलाने के लिए सामान, आधारभूत संरचना, या सांस्कृतिक संसाधन की सीमित पहुँच हो सकती है।
- **कथित प्रासंगिकता :** नीति बनाने वालों, माता-पिता और छात्रों के बीच अक्सर यह सोच होती है कि पारंपरिक या सांस्कृतिक ज्ञान आधुनिक नौकरियों और व्यवसाय के लिए कम ज़रूरी है। इससे पाठ्यक्रम में संस्कृति को कम महत्त्व दिया जाता है।
- **साम्राज्यवादी विरासत और पूर्वाग्रह :** 'आधुनिक' या 'शास्त्रीय' ज्ञान क्या है, इस बारे में साम्राज्यवादी ज़माने के भेदभाव आज भी मौजूद हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा के कुछ बिन्दुओं को अभी भी अंधविश्वास या पुराना मानकर खारिज कर दिया जाता है।
- **वैश्वीकरण और संचार माध्यमों का प्रभाव :** संचार माध्यम /इंटरनेट के ज़रिए वैश्विक संस्कृति के संपर्क में आने से युवा लोग स्थानीय संस्कृति के बजाय वैश्विक संस्कृति को ज़्यादा पसंद करने लगते हैं। संस्कृति का एक जैसा होना खास तरीकों को कमज़ोर करता है।
- **अनुभवजन्य अध्ययन और प्रमाण :** केरल में पनिया जनजाति के बीच एक अभ्यास से पता चलता है कि स्कूलों में स्थानीय ज्ञान को नज़रअंदाज़ करने से पढ़ाई में झगड़े और भेदभाव होते हैं; साथ ही, स्थानीय ज्ञान आदिवासी बच्चों की शिक्षा को सही दिशा देने में मदद करता है।

NEP 2020 की भूमिका और वर्तमान नीतिगत रुझान

NEP 2020 शायद हाल के दशकों में संस्कृति, मूल्य प्रणाली, IKS और बहुभाष्यता को आगे बढ़ाने वाली सबसे प्रभावी भारतीय शिक्षा प्रणाली है। यह स्थानीय ज्ञान का अध्ययन अध्यापन शुरू करने, क्षेत्रीय और स्थानीय बोलियाँ का ज़्यादा इस्तेमाल करने, अनुभवात्मक अधिगम, ज़्यादा समग्र शिक्षा, कम रटने वाले पाठ्यक्रम में कला, नैतिकता, मूल्य को शामिल करने की सलाह देती है।

सुझाव :

भारतीय शिक्षा और संस्कृति के महत्व को पूरी तरह समझने के लिए, ये कदम उठाने की सलाह दी जाती है :

पाठ्यक्रम की रचना : ऐसे पाठ्यक्रम की रचना करें जिसमें भारतीय ज्ञान प्रणाली, स्थानीय, कला, रीति-रिवाज, कहानियाँ, पारंपरिक परिस्थितिकी शामिल हों। इलाके में अलग-अलग तरह के लोग हों, यह पक्का करें ताकि स्थानीय संस्कृति का सम्मान हो।

शिक्षक प्रशिक्षण और व्यावसायिक विकास : शिक्षक को सांस्कृतिक अध्यापन, IKS को समझने, इसे आधुनिक तरीकों के साथ जोड़ने, और भाषाई और सांस्कृतिक विभिन्नता के प्रति ग्रहणशील होने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

कई भाषाओं वाली शिक्षा : शुरुआती पढ़ाई में मातृभाषा/क्षेत्रीय भाषा सिखाने को बढ़ावा दें, स्थानीय भाषाओं में चीज़ें दें, छात्रों को क्षेत्रीय कला, साहित्य, लोकगीत सीखने के लिए बढ़ावा दें।

बुनियादी ढाँचा और संसाधन सहायता : कला, संगीत, हस्तकला की सुविधाओं में निवेश करें; स्थानीय संस्कृति सामग्री वाली ग्रंथालय; समुदाय, त्योहारों, रीति-रिवाजों, कहानी सुनाने वाले कार्यक्रम के लिए निधिकरण।

8. आधुनिकता और परंपरा में संतुलन : विज्ञान, तकनीकी , आधुनिक कौशल को बढ़ावा दें, लेकिन सांस्कृतिक जड़ों की कीमत पर नहीं। उनमें तालमेल बिठाएँ : जैसे, पारंपरिक पारिस्थितिकी प्रथाओं के साथ पर्यावरण विज्ञान पढ़ाना।

निष्कर्ष

भारत के समक्ष एक तरफ वैश्वीकरण की चुनौतियाँ, आर्थिक दबाव और आधुनिक शिक्षा की माँगें हैं; दूसरी तरफ इसकी पुरानी सांस्कृतिक विरासत, भारतीय ज्ञान प्रणाली और मूल्य परंपराएँ हैं जिन्होंने सदियों से न सिर्फ़ ज्ञान दिया बल्कि पूरी तरक्की, पहचान, नैतिक आधार और सामाजिक एकता भी दी है। भारतीय शिक्षा और संस्कृति का महत्त्व बहुत ज़्यादा है। संस्कृति शिक्षा को बेहतर बनाती है, काम का आधार देती है, पहचान, नैतिकता और टिकाऊ तरीकों को बढ़ावा देती है, जबकि शिक्षा संस्कृति को बदलते समय में ज़िंदा रहने, ढलने और फलने-फूलने का ज़रिया देती है। ❑

ISSN 2581-4133

छद्म धर्मनिरपेक्षता भारतीय समाज, राष्ट्र और शिक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती है, जो इसके मूल सिद्धांतों को विकृत कर सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता को प्रभावित करती है। अतः धर्मनिरपेक्षता को उसके वास्तविक अर्थ में समझकर लागू करना आवश्यक है। शिक्षा इस दिशा में महत्वपूर्ण साधन है; यदि यह निष्पक्ष, वैज्ञानिक और मूल्यपरक हो, तो एक सशक्त, समावेशी और एकीकृत राष्ट्र का निर्माण संभव है।

समावेशी धर्मनिरपेक्षता से छद्म धर्मनिरपेक्षता और भारतीय समाज

डॉ. संतोष कँवर शेखावत
महाराजा गंगा सिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर, राजस्थान

भारतीय समाज अपनी विविधतापूर्ण संरचना, धार्मिक विविधता और सांस्कृतिक समृद्धि के कारण विश्व में एक विशिष्ट पहचान रखता है। इस विविधता के मध्य धर्मनिरपेक्षता एक ऐसे सिद्धांत के रूप में उभरती है जो विभिन्न धर्मों, आस्थाओं और परंपराओं के बीच संतुलन स्थापित करता है। यह केवल एक संवैधानिक व्यवस्था नहीं, बल्कि सामाजिक सह-अस्तित्व का आधार है। किंतु आधुनिक समय में 'छद्म धर्मनिरपेक्षता' की अवधारणा ने इस मूल विचार को जटिल बना दिया है। यह शब्द उस स्थिति की ओर संकेत करता है जहाँ धर्मनिरपेक्षता के नाम पर वास्तविक निष्पक्षता के बजाय राजनीतिक या वैचारिक हितों को प्राथमिकता दी जाती है। यह वह स्थिति है जिसमें 'धर्मनिरपेक्षता' के सिद्धांत का वास्तविक, निष्पक्ष और समान रूप से पालन न होकर उसका भेदभावपूर्ण, पक्षपातपूर्ण या राजनीतिक हितों के लिए उपयोग किया जाता है। सरल शब्दों में, जब राज्य या समाज सभी धर्मों के प्रति समान व्यवहार करने के बजाय किसी विशेष समुदाय या समूह के प्रति झुकाव दिखाता है, और इसे धर्मनिरपेक्षता के नाम पर उचित ठहराया जाता है, तो उसे छद्म धर्मनिरपेक्षता कहा जाता है। इससे न केवल सामाजिक संतुलन प्रभावित होता है, बल्कि राष्ट्र की एकता और शिक्षा व्यवस्था पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस संदर्भ में यह आवश्यक हो जाता है कि हम धर्मनिरपेक्षता के वास्तविक स्वरूप और उसके विकृत रूप 'छद्म धर्मनिरपेक्षता' के बीच स्पष्ट अंतर को समझें। स्वतंत्र भारत में कई बार यह आरोप लगाया गया कि कुछ नीतियाँ या निर्णय वास्तविक धर्मनिरपेक्षता के बजाय वोट-बैंक राजनीति से प्रेरित थे, जिससे इस अवधारणा पर सार्वजनिक विमर्श और भी तीखा हुआ। इस प्रकार, राष्ट्र और शिक्षा दोनों ही इस बहस के केंद्र में आ जाते हैं, क्योंकि ये समाज की दिशा निर्धारित करते हैं।

धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा और भारतीय संदर्भ

भारत में धर्म और राज्य का पूर्ण पृथक्करण नहीं, बल्कि सभी धर्मों के प्रति समान सम्मान और संतुलन का दृष्टिकोण अपनाया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि राज्य सभी धर्मों के प्रति समान दृष्टिकोण रखे और किसी एक धर्म को विशेष महत्त्व न दे। भारत में यह अवधारणा ऐतिहासिक रूप से विकसित हुई है, जहाँ विभिन्न धार्मिक समुदायों ने सह-अस्तित्व की परंपरा को बनाए रखा है। संविधान में धर्मनिरपेक्षता को एक मौलिक मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है, जो नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करता है और राज्य को निष्पक्ष बनाए रखता है। यह मॉडल पश्चिमी देशों से भिन्न है, जहाँ धर्म और राज्य के बीच पूर्ण अलगाव देखा जाता है। भारत में धर्मनिरपेक्षता का उद्देश्य विभिन्न धर्मों के बीच संवाद और समन्वय स्थापित करना है, जिससे सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा मिले।

राज्य को किसी एक धर्म का पक्षधर ना होकर सभी को समान अवसर देना चाहिए। इस अवधारणा को व्यवहार में कई उदाहरणों

के माध्यम से देखा जा सकता है। जैसे, भारतीय संविधान का अनुच्छेद 25-28 नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करता है और राज्य को धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप से सीमित करता है। विभिन्न धार्मिक समुदायों को अपने-अपने शैक्षिक संस्थान स्थापित करने का अधिकार दिया गया, जिससे सांस्कृतिक पहचान संरक्षित रह सके। उदाहरण के रूप में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय जैसे संस्थान अलग-अलग सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के बावजूद राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का हिस्सा हैं।

इसके अतिरिक्त, भारत में राज्य द्वारा विभिन्न धार्मिक त्योहारों को मान्यता देना जैसे दीपावली, ईद, क्रिसमस आदि भी इस समावेशी धर्मनिरपेक्षता का उदाहरण हैं। कई राज्यों में तीर्थयात्राओं (जैसे अमरनाथ यात्रा या हज) के लिए प्रशासनिक सहयोग दिया गया, जिसे समर्थक समावेशी नीति मानते हैं। इस प्रकार भारतीय धर्मनिरपेक्षता केवल सिद्धांत नहीं, बल्कि व्यावहारिक संतुलन का एक प्रयास है।

छद्म धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा

छद्म धर्मनिरपेक्षता एक ऐसी अवधारणा है, जो धर्मनिरपेक्षता के मूल सिद्धांतों के विपरीत जाकर चयनात्मक दृष्टिकोण को बढ़ावा देती है। इसमें धर्मनिरपेक्षता के नाम पर कुछ विशेष समुदायों या समूहों के प्रति पक्षपातपूर्ण नीतियाँ अपनाई जाती हैं, जिससे अन्य समुदायों में असंतोष उत्पन्न होता है। यह स्थिति अक्सर राजनीतिक हितों से प्रेरित होती है, जहाँ धर्मनिरपेक्षता को एक उपकरण के रूप में उपयोग किया जाता है। इसके परिणामस्वरूप समाज में भ्रम और विभाजन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जो धर्मनिरपेक्षता के वास्तविक उद्देश्य के विपरीत है।

स्वतंत्र भारत में कुछ घटनाएँ इस बहस के केंद्र में रही हैं। 1985 का शाह बानो मामला एक प्रमुख उदाहरण है, जहाँ सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के बाद संसद द्वारा कानून में बदलाव किया गया। आलोचकों ने इसे धार्मिक तुष्टिकरण के रूप में देखा। इसी प्रकार 2006 की सच्चर समिति की रिपोर्ट के आधार पर अल्पसंख्यकों के लिए विशेष योजनाओं की घोषणा की गई, जिसे कुछ लोगों ने सामाजिक न्याय की दिशा में कदम माना, जबकि अन्य ने इसे वोट बैंक की राजनीति का उदाहरण बताया।

इसके अतिरिक्त, हज सब्सिडी (जो 2018 तक जारी रही) को लेकर भी लंबे समय तक विवाद रहा, जहाँ इसे एक विशेष समुदाय के प्रति पक्षपात के रूप में देखा गया। कुछ राज्य सरकारों द्वारा धार्मिक आधार पर छात्रवृत्तियों या योजनाओं की घोषणा पर भी प्रश्न उठे। इसी तरह, इतिहास लेखन और पाठ्यक्रम निर्माण में कुछ दृष्टिकोणों को प्राथमिकता देने के आरोप भी लगे, जिससे यह धारणा बनी कि शिक्षा प्रणाली में भी वैचारिक पक्षपात हो सकता है।

राष्ट्र निर्माण में धर्मनिरपेक्षता की भूमिका

धर्मनिरपेक्षता भारत जैसे बहुधार्मिक समाज में राष्ट्र निर्माण की आधारशिला है। यह समानता, सहिष्णुता और पारस्परिक सम्मान को बढ़ाकर राष्ट्रीय एकता को मजबूत करती है। राज्य की निष्पक्षता नागरिकों में विश्वास और सुरक्षा की भावना उत्पन्न करती है। इसके विपरीत, पक्षपातपूर्ण व्यवहार सामाजिक तनाव और विभाजन को जन्म देता है। छद्म धर्मनिरपेक्षता इसी अविश्वास को बढ़ाकर राष्ट्र निर्माण को कमजोर करती है। अतः धर्मनिरपेक्षता को राजनीतिक नारे के बजाय एक व्यावहारिक और नैतिक मूल्य के रूप में अपनाना आवश्यक है।

शिक्षा प्रणाली में छद्म धर्मनिरपेक्षता

शिक्षा प्रणाली में छद्म धर्मनिरपेक्षता का प्रभाव पाठ्यक्रम, शिक्षण पद्धति और संस्थागत नीतियों में देखा जा सकता है। इतिहास की पुस्तकों में चयनात्मक घटनाओं को महत्त्व देना, कुछ सांस्कृतिक परंपराओं को कम या अधिक महत्त्व देना, और वैचारिक झुकाव के आधार पर सामग्री तैयार करना इसके उदाहरण हैं।

1970-90 के दशक में इतिहास लेखन को लेकर उठी बहसें और विभिन्न सरकारों द्वारा पाठ्यक्रमों में किए गए बदलाव इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं। इससे विद्यार्थियों के सामने एक संतुलित और वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण प्रस्तुत करने की चुनौती उत्पन्न होती है। शिक्षण पद्धति में वैचारिक झुकाव होने पर विद्यार्थियों की स्वतंत्र और आलोचनात्मक सोच प्रभावित होती है। ऐसी स्थिति में शिक्षा का उद्देश्य, सत्य की खोज और ज्ञान का विकास कमजोर पड़ जाता है। परिणामस्वरूप, विद्यार्थी वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण विकसित नहीं कर पाते और समाज में विभाजन की प्रवृत्तियाँ बढ़ने लगती हैं।

समकालीन चुनौतियाँ एवं समाधान

वर्तमान समय में धर्मनिरपेक्षता और छद्म धर्मनिरपेक्षता का प्रश्न वैश्वीकरण, डिजिटल मीडिया और राजनीतिक ध्रुवीकरण के कारण अधिक जटिल हो गया है। सोशल मीडिया पर सूचनाओं के तेज प्रसार में कई बार अपूर्ण या पक्षपातपूर्ण सामग्री से भ्रम और तनाव पैदा होता है। साथ ही, सांस्कृतिक पहचान और राजनीतिक हितों के बीच संतुलन बनाना चुनौतीपूर्ण है। शिक्षा संस्थानों पर बढ़ते वैचारिक प्रभाव से उनकी निष्पक्षता पर भी प्रश्न उठते हैं, इसलिए समाज और शिक्षा प्रणाली को संतुलित व विवेकपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है।

इस समस्या के समाधान के लिए शिक्षा प्रणाली में सुधार आवश्यक है। विद्यार्थियों में आलोचनात्मक सोच, नैतिक मूल्य और सहिष्णुता विकसित की जानी चाहिए। पाठ्यक्रमों को संतुलित और तथ्यात्मक बनाया जाए, तथा शिक्षक निष्पक्ष और जागरूक दृष्टिकोण अपनाएँ। साथ ही, समाज में संवाद और पारस्परिक समझ को बढ़ावा देकर विभिन्न समुदायों के बीच विश्वास और सहयोग को सुदृढ़ किया जा सकता है।

निष्कर्ष

छद्म धर्मनिरपेक्षता भारतीय समाज, राष्ट्र और शिक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती है, जो इसके मूल सिद्धांतों को विकृत कर सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता को प्रभावित करती है। अतः धर्मनिरपेक्षता को उसके वास्तविक अर्थ में समझकर लागू करना आवश्यक है। शिक्षा इस दिशा में महत्त्वपूर्ण साधन है; यदि यह निष्पक्ष, वैज्ञानिक और मूल्यपरक हो, तो एक सशक्त, समावेशी और एकीकृत राष्ट्र का निर्माण संभव है। ❑

Before Macaulay : The Untold History of Indian Education

Dr. Mandala Chandrashekhar Goud

Assistant Professor,
Department of Education,
Central University of Karnataka

To study the history of education in Indian society is, therefore, not an exercise in nostalgia. It is an act of justice: justice to the millions of teachers and students whose tradition was not merely interrupted but deliberately delegitimised. It is also an act of imagination: a recovery of possibilities. The Gurukula's wholeness, the traditional occupation's dignity of craft, the 64 kalas' refusal to rank one form of knowledge above another, and the universal aspiration of Nalanda, these are not relics to be displayed in a museum.

The misconception that the Indian educational system consisted solely of the Ashram system of education began with the arrival of Macaulay and persisted until the last decades. In reality, the education system that existed prior to the British arrival was a comprehensive, self-reliant, skill-oriented, and holistic educational framework-one in which unemployment was nowhere to be found. The nation, society, and education functioned as mutually supportive and complementary entities. Students acquired knowledge from previous generations across a diverse array of fields, including medicine, arts, sculpture, agriculture, animal husbandry, commerce, trade, handicrafts, astronomy, mathematics, and chemistry-and they did so with one hundred percent precision.

Generations of Indian students had already been bringing home their mastery across a diverse array of fields, long before the first stone of Oxford was laid. Then in the Indian subcontinent, long before any European country had been thought of a public school, there was a seat of learning in every village. This is not the mythology of nationalism; it is historical fact, recorded in the surveys of the British districts in the 1820s and rediscovered by the scholar Dharampal in his groundbreaking work- “The Beautiful Tree”. But this great civilizational movement was not destroyed, distorted, buried by chance, but by the conscious design of the colonialism.

At the time when Thomas Babington Macaulay wrote his

Minute on Indian Education in February 1835, he had not read a line of Sanskrit or Persian. But he said with the pomp of an emperor that a shelf of European books was equal to the whole of native Indian literature. Education was not his aim; it was substitution. In his own terms, he desired to 'establish a breed of men, Indian in blood and colour, but English in tastes, opinions, and intellect'. The Gurukula which had maintained the intellectual, moral and spiritual life of India thousands of years was rejected as being superstitious. The 64 arts which made a complete man were made fun of as irrelevant. The master craftsmen who had sewn the so-called Muslin of Dhaka and erected temples that continue to puzzle modern day engineers were turned by the colonial policy into mere labour. Macaulay did not simply have a new curriculum; he created 'an amnesia of civilization'.

What exactly was being destroyed?

Education as complete way of life was the Gurukula: the family of the Guru. The learner did not just attended classes; he lived in the house of the Guru, gained knowledge every day, through rigorous routine and a relation of absolute trust. The curriculum was astounding in its completeness. The body was trained in yoga, wrestling and martial arts. Logic, grammar, mathematics and astronomy were used to sharpen the mind. The heart was nurtured by music, poetry and morals. It was the spirit that was sustained by meditation and philosophical enquiry. The academic and the human were not divided. A student who had dropped out of the Gurukula was not only learned, he was carved as a complete man. Contemporary education theorists have attempted to re-create this ideal over many decades under numerous names: holistic education, experiential learning and social - emotional development. It was already experienced in ancient India.

Vocational Education

In parallel with the tradition of Gurukula existed another, equally deep, tradition: Traditional occupation, the passing of professional knowledge in families and communities through generations. To the colonial historians, this could only be attributed to the inflexibility of caste. What they overlooked, or preferred to overlook, was the genius of a system of civilizational memory. The family of the potter did not simply produce pots, they held centuries of knowledge inside of them; knowledge of clay, of kiln firing, of the soil of the area, and of taste. The home of the blacksmith was a metallurgy laboratory. The house of the weaver was a school of mathematics--in every intricate design on an Indian loom is the exact mathematical system. It was an inter-generational apprenticeship that yielded a level of craft which has never been reproduced by the industrial age. That rust-free Iron Pillar of Delhi that has not been spoilt in sixteen centuries is not a miracle, but the result of traditional knowledge system. Every family had a role, every community had a craft, and unemployment, as we understand it today, simply did not exist. Work was not only a means of livelihood but a living repository of culture, knowledge, and identity. The National Education Policy 2020 has done the right thing by attempting to restore the dignity of vocational education from Class 6 onward: a small yet significant practice of civilizational recovery.

The 64 Kalas

The full vision of what Indian education aspired to is perhaps best captured in the tradition of the 64 kalas (Arts), sixty-four arts and

ISSN 2581-4133

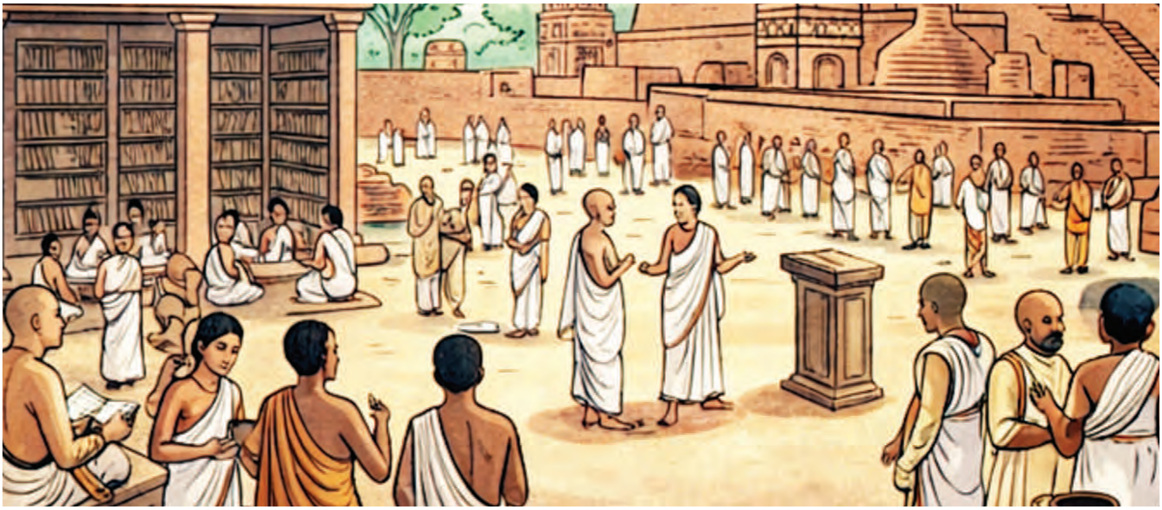

sciences that a cultivated person was expected to know. Referenced across Sanskrit literature from Vatsyayana's Kamasutra to the Buddhist Lalitavistara, the 64 kalas encompassed vocal and instrumental music, dance, dramaturgy, painting, sculpture, architecture, mathematics, astronomy, medicine, martial arts, culinary arts, textile crafts, logic, poetic composition, trade, and agricultural science, among many others. What is remarkable is not the length of the list but its underlying philosophy: that there is no hierarchy among forms of human knowledge. The dancer and the mathematician, the surgeon and the poet, the farmer and the astronomer, all were practitioners of equally dignified arts. No knowledge was beneath the educated person; no skill was unworthy of mastery. This vision of the 64 kalas anticipated by two thousand years what we now call 21st-century competencies.

Women Education and International Education

This was also, at its best, an education that did not entirely exclude women. The Rigveda records the Brahmavadinis: women who composed Vedic hymns. Gargi Vachaknavi debated publicly with the great sage Yajnavalkya before an assembled court. Maitreyi chose philosophical knowledge over material inheritance. The Therigatha: an anthology of poems composed entirely by Buddhist bhikshuni, stands as evidence that the educated woman was not an anomaly in ancient India but a recognised presence. At its institutional heights, in the great university of Nalanda, which housed ten thousand students, and the Library of Nalanda, known as Dharmaganja, with nine million manuscripts, knowledge was pursued with the rigour and cosmopolitan ambition of any institution in human history. Scholars came from Tibet, China, Korea, and Persia to study, debate, and learn. The deliberate burning of Nalanda's library by Bakhtiyar Khilji in 1193 CE, and the subsequent colonial erasure of what remained, together constitute one of history's most consequential acts of intellectual destruction.

To study the history of education in Indian society is, therefore, not an exercise in nostalgia. It is an act of justice: justice to the millions of teachers and students whose tradition was not merely interrupted but deliberately delegitimised. It is also an act of imagination: a recovery of possibilities. The Gurukula's wholeness, the traditional occupation's dignity of craft, the 64 kalas' refusal to rank one form of knowledge above another, and the universal aspiration of Nalanda, these are not relics to be displayed in a museum. They are living principles waiting to be reactivated. An education system that is truly for the nation must begin by knowing, honouring, and learning from the nation's own educational soul. The beautiful tree was uprooted. It is time, at last, to plant it again.❑

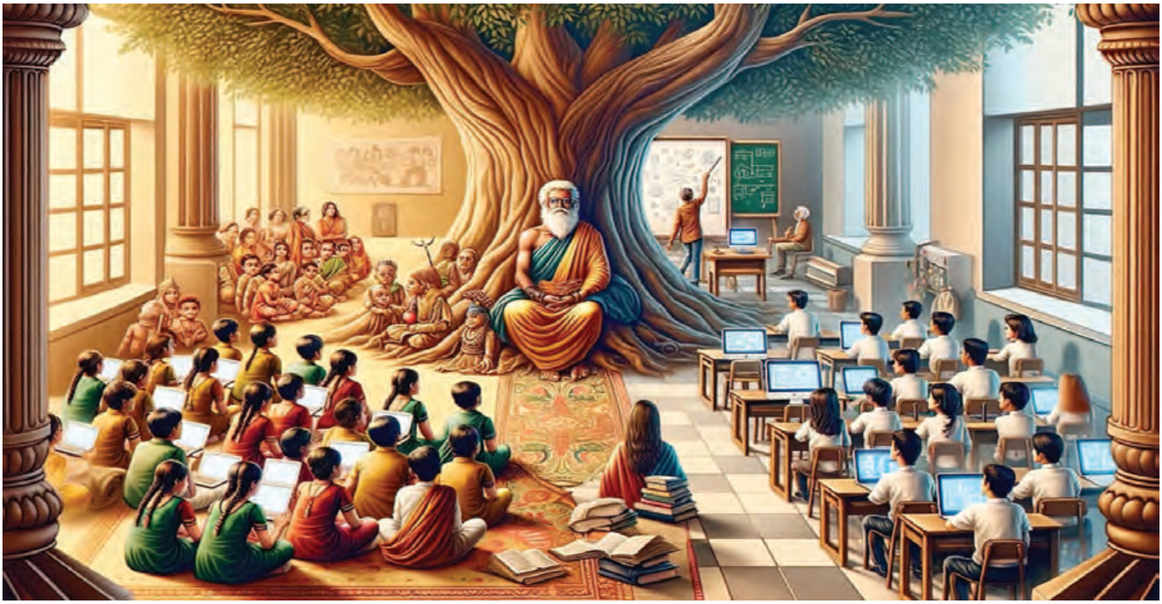

From Gurukul to Global Classrooms : The Evolution of Education in Indian Society

Dr. Anjali K. Patil

Associate Professor
Department of English
Dadasaheb Devidas
Namdeo Bhole College,
Bhusawal, Maharastra

The history of education in Indian society reflects a journey of continuous adaptation and transformation. From the spiritual and holistic approach of ancient education to the structured systems of the colonial era and the inclusive policies of modern India, education has played a central role in shaping society. Each phase has contributed unique elements, creating a rich and diverse educational heritage.

The history of education in Indian society represents a continuous process of evolution shaped by philosophical traditions, religious practices, political transformations, and socio-economic changes. From the ancient Gurukula system that emphasized holistic development to the establishment of medieval Madrasas and Pathshalas, and from colonial educational reforms to post-independence democratization, the Indian education system has undergone profound changes. This article critically examines the development of education in India across different historical phases, highlighting its objectives, institutional structures, and socio-cultural implications. It also explores the impact of colonialism on indigenous education and evaluates contemporary reforms in the context of globalization. The study argues that Indian education reflects a synthesis of tradition and modernity, and its future depends on addressing challenges such as inequality, quality, and accessibility.

Introduction

Education in India has always been regarded as a powerful instrument for personal growth and societal transformation. Unlike purely utilitarian systems, traditional Indian education sought to harmonize intellectual, moral, and spiritual development. Knowledge was not merely seen as information but as a path toward self-realization and liberation. The historical trajectory of Indian education reveals a complex interplay between continuity and change. As G. W. Leitner observes, "India has had a system of education of her own, which was founded on her own institutions and suited to her own wants." This

 ISSN 2581-4133

remark underscores the indigenous roots of Indian education before the advent of colonial influence. The evolution of education in Indian society can be broadly understood through four major phases: ancient, medieval, colonial, and post-independence periods. Each phase reflects the dominant cultural and political forces of its time and contributes to the shaping of modern educational practices.

Ancient Indian Education : Foundations of Knowledge

The origins of formal education in India can be traced back to the Vedic period (1500 BCE-600 BCE), during which the Gurukula system emerged as the primary mode of instruction. In this system, students lived with their teachers in a disciplined and spiritually charged environment. The relationship between the teacher (guru) and the student (shishya) was sacred and deeply personal. Education during this period was not confined to academic subjects alone. It included the study of the Vedas, Upanishads, grammar, logic, philosophy, astronomy, medicine, and military science. The aim was to develop a well-rounded individual capable of fulfilling social and religious duties. A distinctive feature of ancient Indian education was its emphasis on oral transmission. Knowledge was memorized and recited, ensuring accuracy and continuity. This method also cultivated concentration and intellectual discipline. The establishment of great centers of learning such as Nalanda and Takshashila marked a significant advancement in higher education. Nalanda, in particular, attracted scholars from across Asia and offered courses in diverse fields such as Buddhist philosophy, medicine, mathematics, and linguistics. These institutions functioned as early universities, fostering intellectual exchange and scholarly research. Ancient education also emphasized ethical values and character formation. The concept of "Sa Vidya Ya Vimuktaye" (true knowledge is that which liberates) reflects the philosophical depth of the Indian educational tradition. However, it is important to note that access to education during this period was often restricted by caste and gender. While upper-caste males received formal education, women and lower-caste individuals had limited opportunities, though exceptions existed.

Medieval Indian Education : Cultural Synthesis and Diversity

The medieval period (8th to 18th century) introduced new dimensions to Indian education with the advent of Islamic rule. The establishment of Maktabs and Madrasas brought structured educational institutions that focused on religious and literary studies. Madrasas offered instruction in subjects such as theology, law (Sharia), philosophy, mathematics, astronomy, and Persian literature. Persian became the language of administration and education, influencing the intellectual landscape of the time. Simultaneously, traditional Hindu institutions such as Pathshalas and Tols continued to function, preserving Sanskrit learning and religious teachings. This coexistence of Hindu and Islamic educational systems created a unique cultural synthesis. Education during this period was largely community-based and often supported by religious endowments. Temples, mosques, and charitable institutions played a crucial role in sustaining educational activities. Despite its richness, medieval education had certain limitations. It was largely elitist and focused on religious instruction. Scientific inquiry and practical knowledge were not as emphasized as in earlier periods. Female education remained limited, although some royal and elite women received instruction. Nevertheless, the medieval period contributed significantly to the diversification of Indian education by introducing new languages, disciplines, and pedagogical practices.

Indigenous Education in Pre-Colonial India

Before British intervention, India possessed a widespread network of indigenous educational institutions. Village schools, temple schools, and community-supported learning centers formed the backbone of education. Dharampal's research in “The Beautiful Tree” highlights that education in pre-colonial India was more extensive than previously assumed. He notes that a significant proportion of children attended schools, and education was often funded by local communities. Leitner's observation further reinforces this view:

"There was hardly a village in which there was not at least one school." These institutions were flexible, accessible, and adapted to local needs. Instruction

was often imparted in regional languages, making education more inclusive. Subjects included arithmetic, reading, writing, and practical skills relevant to daily life. The indigenous system was characterized by decentralization and community participation. However, it began to decline with the introduction of colonial policies that undermined traditional institutions.

Colonial Education : Transformation and Disruption

The colonial period marked a turning point in the history of Indian education. British policies introduced a new system based on Western ideals, fundamentally altering the structure and purpose of education. One of the most significant developments was Thomas Babington Macaulay's Minute on Education (1835), which advocated for English as the medium of instruction. Macaulay famously stated the need to create "a class of persons Indian in blood and colour, but English in tastes, in opinions, in morals and in intellect." Wood's Despatch of 1854 further institutionalized modern education by recommending the establishment of universities, teacher training institutions, and a hierarchical system of education. While colonial education introduced modern subjects such as science, mathematics, and history, it also led to the decline of indigenous systems. Traditional institutions lost patronage and were gradually replaced by formal schools and colleges. At the same time, the colonial period witnessed the rise of social reform movements that emphasized education as a means of social progress. Reformers like Raja Ram Mohan Roy, Ishwar Chandra Vidyasagar, and Jyotirao Phule advocated for women's education and the upliftment of marginalized communities. Thus, colonial education had a dual impact: it modernized the system while simultaneously disrupting traditional structures.

Post-Independence Education : Expansion and Reform

After independence in 1947, India recognized education as a cornerstone of national development. The government undertook significant efforts to expand access and improve quality. The Constitution of India emphasized the importance of education, and policies such as the National Policy on Education (1968, 1986) aimed to promote equality and modernization. The Right to Education Act (2009) made elementary education a fundamental right. Post-independence education has focused on inclusivity, aiming to bridge gaps based on caste, gender, and economic status. There has been a rapid expansion of educational institutions, including universities, technical institutes, and research centers. However, challenges such as illiteracy, dropout rates, and regional disparities have persisted. The quality of education and the relevance of the curriculum have also been subjects of debate.

Contemporary Developments and Future Prospects

In the 21st century, Indian education is undergoing a significant transformation driven by globalization and technological advancements. Digital learning platforms, online education, and skill-based training have become increasingly important. The National Education Policy 2020 represents a major reform aimed at creating a holistic, flexible, and multidisciplinary education system. It seeks to integrate traditional knowledge with modern innovation and emphasizes critical thinking and creativity. Despite these advancements, challenges remain. Educational inequality, lack of infrastructure, and the need for teacher training continue to affect the system. Addressing these issues is crucial for ensuring equitable and quality education for all.

Conclusion

The history of education in Indian society reflects a journey of continuous adaptation and transformation. From the spiritual and holistic approach of ancient education to the structured systems of the colonial era and the inclusive policies of modern India, education has played a central role in shaping society. Each phase has contributed unique elements, creating a rich and diverse educational heritage. While ancient education emphasized moral and spiritual growth, colonial education introduced modern disciplines, and post-independence reforms have focused on accessibility and equity. The future of Indian education lies in balancing tradition with innovation. By preserving its cultural roots while embracing global advancements, India can build an education system that is both inclusive and forward-looking. ❑

The Importance of Education in the Holistic Development of Bharat : A Socio-Economic and Cultural Analysis

Dr. Pankaj Chakraborty

Assistant Professor
Department of Political Science, DDM College, Khowai, Tripura

Education is the backbone of Bharat's holistic development. It influences economic growth, social equity, political stability, cultural preservation, and human well-being. The realization of *'sarvangin vikas'* depends on making education accessible, equitable, and value-oriented. As Bharat aspires to become a global leader, investment in education must focus on both quantitative expansion and qualitative improvement. Strengthening public education systems, reducing regional disparities, and promoting research and innovation are essential steps.

Education is considered as the cornerstone of national development. In the context of Bharat, education is not merely a tool for economic advancement but a transformative force that shapes the social, cultural, political, and moral dimensions of society. The concept of *'sarvangin vikas'* (holistic development) encompasses on material progress as well as human well-being, ethical consciousness, and social harmony (Sen, 1999). Historically, Bharatiya thought has viewed education as a means of self-realization and social responsibility rather than mere livelihood generation. Today, as Bharat aspires to emerge as a global power, the role of education becomes even more significant. This paper examines the critical role of education in fostering the comprehensive development of Bharat, drawing upon historical insights, contemporary policies, empirical trends, and future challenges.

Education - Driver of Economic Development: One of the most visible contributions of education to national development is in the economic sphere. A well-educated workforce of a nation enhances productivity, innovation, and competitiveness. Knowledge and skills have become key determinants of economic success in today's rapidly digital technology-driven world, (Tilak, 2003). In Bharat, the expansion of technical and higher education institutions has significantly contributed to sectors such as information technology, engineering, healthcare, pharmaceuticals, and services. Bharat's IT sector contributes approximately 7-8% to the national GDP and employs millions of

professionals. It reflects the importance of education in economic growth (Government of India, 2020). Education also plays a crucial role in reducing poverty and income inequality. Government initiatives such as Skill India, Digital India, and vocational training programs aim to equip youth with market-relevant skills, thereby enhancing employability. However, challenges persist. The issue of educated unemployment indicates a mismatch between academic curricula and industry needs. This is why aligning education with economic demands while preserving its broader humanistic values remains a key policy priority.

Social Transformation through Education : Education is the most powerful instrument for social transformation. In a diverse and stratified society like Bharat, education helps bridge social divides and fosters a sense of unity and national integration (UNESCO, 2015). India's literacy rate has witnessed remarkable improvement. As per government data, the literacy rate improved from about 18% in 1951 to over 77% in recent estimates (Government of India, 2020). This expansion reflects the growing reach of educational institutions across rural and urban areas. Women's education is particularly transformative. Studies show that educated women are more likely to participate in the workforce, make informed decisions, and ensure better health and education outcomes for their families (UNDP, 2020). Government schemes promoting girls' education have contributed to narrowing gender disparities, although challenges remain in certain regions.

Political Awareness and Democratic Values : Education is fundamental to the functioning of a vibrant and participatory democracy. An educated citizenry is better equipped to understand political processes, exercise voting rights responsibly and hold government accountable (Sen, 1999). Education in Bharat fosters political awareness, civic responsibility, and adherence to constitutional values such as justice, liberty, equality, and fraternity. It encourages critical thinking and informed decision-making, which are essential for meaningful participation in democratic institutions. The expansion of education has contributed to increased voter turnout and greater public engagement in political discourse. Citizens today are more aware of their rights and responsibilities, which strengthens democratic governance.

Cultural Preservation and Value Formation : A distinctive feature of Bharatiya education is its emphasis on cultural continuity and value-based learning. Education serves as a medium for transmitting cultural heritage, traditions, and ethical values from one generation to another (Vivekananda, 1996). Ancient Indian education systems emphasized holistic development, integrating intellectual, moral, and spiritual dimensions. Thinkers like Mahatma Gandhi advocated for Nai Talim (New Education), which emphasized learning through productive work and moral development (Gandhi, 1937). Similarly, Swami Vivekananda emphasized character-building education as the foundation of national regeneration. In the modern era, globalization and technological advancement have brought new challenges to cultural preservation. Education plays a crucial role in maintaining a balance between modernization and cultural rootedness. Bharat can preserve its rich cultural heritage while adapting to global changes by incorporating value-based education and indigenous knowledge systems.

Education and Human Development : Holistic development extends beyond economic growth to include human well-being and quality of life. Education is a key component of human development, influencing health, income, and overall living standards (UNDP, 2020). Educated individuals are more likely to adopt healthy lifestyles, access healthcare services, and make informed decisions. Education also fosters creativity, innovation, and emotional intelligence, which are essential for personal and professional growth. With rapid technological changes and evolving job markets, individuals need continuous learning and skill development to remain relevant.

Challenges in Achieving Holistic Development through Education : The education system in Bharat faces several structural and systemic challenges. These include unequal access, quality disparities, outdated curricula, and disconnect between education and employment (Tilak, 2003). The rural-urban divide remains a significant concern. The digital divide further exacerbates inequalities, as many students do not have access to online learning resources. Another challenge is the prevalence of rote learning, which limits critical thinking, creativity, and problem-solving skills. There is an urgent need to shift towards experiential and skill-based learning approaches. Addressing these challenges requires comprehensive reforms focusing on quality, inclusivity, teacher training, and technological integration.

Policy Initiatives and the Way Forward : Recognizing the importance of education, the Government of India has introduced several policy initiatives. The National Education Policy 2020 marks a significant step towards transforming the education system. This emphasizes holistic, multidisciplinary, and flexible learning, aiming to increase the Gross Enrollment Ratio in higher education to 50% by 2035 (Government of India, 2020).

The policy also focuses on foundational literacy and numeracy, vocational education, and the integration of technology in education. Digital platforms such as SWAYAM, DIKSHA, and e-Pathshala aim to improve access to quality education. However, the success of these initiatives depends on effective implementation, adequate funding, and coordination among stakeholders. Public-private partnerships, community participation, and continuous evaluation are essential for achieving desired outcomes.

Conclusion

Education is the backbone of Bharat's holistic development. It influences economic growth, social equity, political stability, cultural preservation, and human well-being. The realization of *'sarvangin vikas'* depends on making education accessible, equitable, and value-oriented. As Bharat aspires to become a global leader, investment in education must focus on both quantitative expansion and qualitative improvement. Strengthening public education systems, reducing regional disparities, and promoting research and innovation are essential steps. By integrating traditional wisdom with modern knowledge and addressing systemic challenges, education can serve as the most powerful catalyst for building a prosperous, inclusive, and harmonious Bharatiya society. ❑

India Transformed Towards a Value Based Digital Nation under National Education Policy, 2020

The present day is called the days of digitalization. The world is now transforming towards the digital nation. Education is an important basic parameter in the process of transformation. India targeted to achieve the goals of 'Vikshit Bharat' in 2047 by developing all aspects of physical and social infrastructure. Transformed the country towards a digital nation is one of the vision of the mission. The National Education Policy, 2020, is one of the master initiatives taken by the government that has provisions for bridging between tradition and modernity to follow the path of the use of sustainable technology.

Dr. Anil Kumar Biswas

Professor, Department of Political Science
The University of Burdwan
West Bengal

In present day, nations across the world are taking initiatives for buildup digitally vibrant nation. A digital nation means a state that uses digital technology, digital infrastructure, and data to transforms country's economy, governance, and society to aim for increased efficiency, inclusivity, and competitiveness. The key pillars of a digital nation are its digital identity with digitally trained human resources, universal digital connectivity, paperless services and digital economy. Public-Private Partnership, nurturing innovation, digital literacy and sustainable development are the basic features a digital nation. Countries are now visionaries to build a digital nation by enhancing their infrastructure of digital economy, building strong social safety networks and providing efficient and fair governance. India is the fourth largest economy and oldest civilization in the world. India introduces the 'Digital India Campaign' in 2015 for transforming the nation into a digitally empowered society and knowledge economy. Education can play a crucial role in this transformation. The National Education Policy, 2020, aims to address the numerous growing developmental imperatives, particularly those related to the 2030 Agenda for Sustainable

ISSN 2581-4133

Development Goals (SDG-4) (NEP, 2020). In this context, the National Education Policy framed the provisions for the transformation of Indian education through the use of new technological developments such as Artificial Intelligence, Machine Learning, Blockchain Smart Boards, handheld Computing Devices, Adaptive Computer testing, and the use of other forms of educational software and hardware for the demands of the 21st century. A few digital platforms, such as National Repository of Education Resources, DIKSHA, E-Path Sala, Swayam, Swayam Prabha, National Academic Depository, National Digital Library, and Virtual Labs, have played an important role in transforming education from a traditional mode to a technology-based one with Indian tradition and values. From this background, the present study aims to analyze how the provisions of NEP support the transformation of education in India to value-based digital education by fulfilling the aims of Value based digital nation.

National Education Policy, 2020

The National Education Policy, 2020, is the first education policy of the 21st century that aims to address the many growing developmental imperatives of the country (Biswas, 2024a). This policy proposes the revision and revamping of all aspects of the education structure, including the regulations and governance, to create a new system that is aligned with the aspirational goals of 21st-century education, along with India's traditions and values (Ministry of Human Resource Development, 2020a). The policy emphasizes the creativity of individual. The policy is based on the principles that education develops the cognitive capacities of the learners in every stage, along with social, ethical, emotional capacities, including cultural awareness and empathy, teamwork and leadership, service and sacrifice, courtesy and sensitivity, oral and written communication, integrity and work ethic (Biswas, 2024b).

Provisions of Using Technology in Education under NEP, 2020

Extensive use of technology in teaching and learning is one of the major features of the National Education Policy, 2020. The policy includes various provisions for the optimum use of technologies in the teaching and learning process to meet the demands of digital nation. The policy can make a bridge between the traditions of the Indian value system with modern technologies. To achieve the goals, the policy includes the following provisions:

- The policy gives an explosive scope for the use of technologies in teaching and learning through technological development and tech-savvy teachers and entrepreneurs (National Education Policy, 2020).
- The policy has a provision to set up an autonomous body, the National Educational Technology Forum, for the exchange of ideas on the use of technology in teaching and learning processes in higher and school education (National Education Policy, 2020).
- The act has a provision for the introduction of a wide variety of educational software for students and teachers of all levels. The act says that teaching-learning e-content will continue to be developed by all states in regional languages as well as by NCERT, CBSE, NIOS, and other bodies, and will be uploaded onto the National Teachers' portal, DIKSHA. Video-viewing equipment will be made available to teachers at all schools so that teachers

can suitably integrate open educational videos into teaching and learning processes. Technology-based education platforms, such as DIKSHA/SWAYAM, will be better integrated across school and higher education (National Education Policy, 2020) ;

- The policy endorsed the NITI Aayog's discussion paper, "National Strategy for Artificial Intelligence: #AI For All" for the provision of uses of Artificial Intelligence (AI) in the teaching and learning process. For that, the National Educational Technology Forum is working for the optimum and careful use of AI in the teaching and learning processes in higher and school education (National Education Policy, 2020) ;
- The National Research Foundation initiates and expands research efforts in the technology, including fundamental research in the domain, development of the technology and assessment of its socio-economic impact. (National Education Policy, 2020);
- Universities across the country aim to offer Ph.D. and Master programmes in areas like Machine Learning, as well as multidisciplinary fields and professional areas. They also develop and disseminate courses in these areas via platforms, such as SWAYAM. HEIs may offer targeted training in low expertise tasks for supporting the AI value chain, such as data automation, image classification, and speech transcription (National Education Policy, 2020);
- The policy suggested for the inclusion of disruptive technologies in the syllabus of current affairs and ethical issues at the school level was identified by the NETF/MHRD;
- The act has provisions for the inclusion of ethical issues of the uses of AI in the syllabus of educational institutions for the protection of privacy and other related issues (Ministry of Human Resource Development, 2020c).

Conclusion

The present day is called the days of digitalization. The world is now transforming towards the digital nation. Education is an important basic parameter in the process of transformation. India targets to achieve the goals of 'Vikshit Bharat' in 2047 by developing all aspects of physical and social infrastructure. Transformation of the country towards a digital nation is one of the vision of the mission. The National Education Policy, 2020, is one of the master initiatives taken by the government that has provisions for bridging between tradition and modernity to follow the path of the use of sustainable technology. The policy has provisions of trained learners through tech-savvy, trained professional teachers to meet the demands of the vision 'digital nation'. India, traditionally a spiritual country, has a belief in mutual trust, sharing, caring, faith and humanity (Biswas, 2026). At the same time, India has an infrastructure of trained human resources as per the demands of its own and also the global markets. In India, there are techno-trained human resources with traditional values; who are basic pillar of a digital nation. But in conclusion, it can be said that the success of digitalization of Indian Education and its impact on society towards transforming a digital nation will depend on the successful implementation of the policy, and the whole mechanism depends on the kindness of political leaders and bureaucrats, and overall cooperation between the centre and states.❑

Education and Indian Culture : Ancient Roots and Modern Practice

V. Venkata Ramana Rao

M.Sc (Ph.D), B.Ed. School Assistant (Phy-Sci) ZPHS Cheppial Mandal Kodimial Dist Jagtial, Telangana

Education and culture are not distinct entities. Education without culture is like a body without a soul. For India to rise again as 'Vishwa Guru' , our education system must be anchored in our cultural roots. Through the Indian philosophy of "Vasudhaiva Kutumbakam" (The World is One Family), we have the capacity to show solutions to global problems like war and pollution. It is the responsibility of all of us to build a new generation that protects our culture while bravely facing modern challenges.

In the Indian way of life, education is not merely a means to achieve literacy or a career; it is a sacred "Samskara" (refinement). Our ancient Vedic wisdom proclaims, "Sa Vidya Ya Vimuktaye" (That which liberates is education). If Indian culture has preserved its identity for thousands of years, the primary reason is our robust educational foundation. While education acts as the vehicle for culture, culture provides the soul to education. The ultimate goal of education is to mold an individual into a refined human being and a citizen beneficial to society.

1. Ancient Indian Education System - The Cultural Foundation

India has historically been the "Land of Knowledge" for the world. In ancient times, education was not confined within the four walls of a classroom; it flourished in the lap of nature under the direct supervision of Gurus.

- **The Gurukul System :** In Gurukuls, there was no discrimination between the rich and the poor. For instance, in the ashram of Sage Sandipani, Lord Krishna (a prince) and Sudama (a poor Brahmin) studied together. This is a supreme example of 'Equality' and 'Fraternity' ingrained in our educational culture.
- **Pancha-Kosha Development :** Indian education was not just intellectual. It aimed at developing the five sheaths of the human personality: Annamaya (Physical), Pranamaya (Vital), Manomaya (Mental), Vignanamaya (Intellectual), and Anandamaya (Blissful).
- **The Four Purusharthas :** Education taught the balance of Dharma (Righteousness), Artha (Prosperity), Kama (Desire), and Moksha (Liberation). It taught not just how to earn wealth, but how to utilize it righteously.

2. Cultural Values in Education: Practical Examples

In our culture, every tradition has a scientific and educational dimension. Education was never just in books; it was in practice.

- **Arts and Sciences :** Ancient Indians taught 64 arts (Chatushashti Kalalu). These included not just music and dance, but also architecture, gemology, culinary arts, and martial arts, ensuring multi-faceted brilliance in a student.
- **Yoga and Ayurveda :** Today, the entire world is turning towards Yoga. Ancient Indians realized thousands of years ago that mental development is only possible with physical health and integrated it into education.

3. Revival of Cultural Values through Education

In today's mechanical life, values that are fading away can only be brought back into the light through education.

- **Mother Tongue - The Lifeblood of Culture :** Language is not just a tool for communication; it is a reflection of culture. When students learn in their mother tongue, their grasp of the moral values provided by national poets and scholars increases significantly. The impact of the verses of Vemana or the morals of Sumati Shatakam is profound when read in the native language.
- **The Guru-Shishya Parampara :** In the modern system, there is a growing trend of viewing teachers as 'service providers.' This must change. Reviving the culture of respecting the Guru as a guide and a donor of knowledge will foster humility and discipline in students.
- **Festivals and Social Awareness :** Celebrating festivals like Sankranti and Ugadi in educational institutions allows for the explanation of the science behind them (celestial changes, health principles). This fosters environmental love and social responsibility in children.

4. Historical Transitions - The Macaulay Impact

The education system introduced by Lord Macaulay during British rule (1835) distanced Indians from their roots. Its goal was to create a class of "clerks." Consequently, a sense that our own languages and traditions were "inferior" was planted in our minds. Overcoming this 'mental slavery' is the primary task of today's education system.

5. Modern Challenges and Solutions

In the era of globalization, the challenges facing the Indian education system and their potential solutions are discussed below.

Challenges

1. **Westernization :** Students are blindly imitating Western lifestyles, which is adversely affecting our family systems and moral values.
2. **Commercialization :** Education has turned into a business where 'ranks' and 'packages' are the only benchmarks, prioritizing financial gain over human values.
3. **Digital Addiction :** Excessive use of the internet and social media is distancing students from books and nature, causing decreased concentration and mental stress.

Solutions :

- **Integrated Education :** We should not reject modern technology (AI, Robotics), but we must integrate it with our culture. Learning Computer Science while imbibing the wisdom of the Upanishads is the need of the hour.
- **Value-Based Education :** Moral stories and Puranic legends should not be taught just as stories but as lessons in ethics. 'Social Internships' where students serve in old age homes or orphanages can cultivate human values.
- **Yoga and Meditation :** To ensure mental strength, Yoga must be an integral part of the daily school routine to provide internal peace.

6. National Education Policy 2020 (NEP 2020) - A Ray of Hope

The current Indian government's New Education Policy is an attempt to unearth Indian roots again.

- **Indian Knowledge Systems (IKS) :** Incorporating the achievements of ancient India in mathematics, astronomy, and medicine into the curriculum.
- **Multilingualism :** Ensuring medium of instruction in the mother tongue at least until Grade 5 to establish a strong bond between the student and their culture.

Conclusion

Education and culture are not distinct entities. Education without culture is like a body without a soul. For India to rise again as 'Vishwa Guru' , our education system must be anchored in our cultural roots. Through the Indian philosophy of "Vasudhaiva Kutumbakam" (The World is One Family), we have the capacity to show solutions to global problems like war and pollution. It is the responsibility of all of us to build a new generation that protects our culture while bravely facing modern challenges. ❑

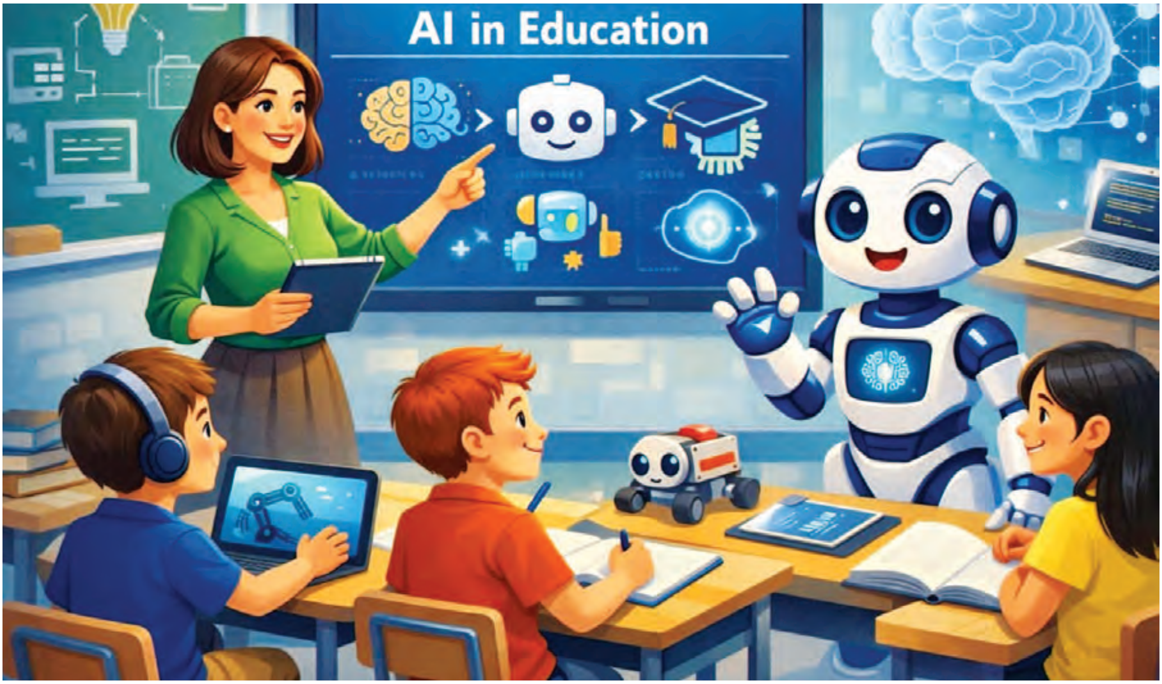

Education, Artificial Intelligence and the Role of Learning in Nation Building

Dr. Jitendar
Assistant Professor
Ramjas College
University of Delhi

In the end, education is more than just about learning or getting a job - it's about building a strong and fair society. With technology changing so fast, education is even more important now. It needs to help people connect with each other and with the digital world, think critically and make good choices, and get ready for a world that's always changing.

Education is more than just getting degrees or certificates - it's a powerful tool that changes people and societies. It helps us see the world in a new way, understand what's going on, and take part in making things happen. Education encourages us to ask questions, think about different possibilities, and get involved in shaping our communities. Today, it's also important to learn about new technologies like Artificial Intelligence, which are changing how we think about knowledge, work, government, and even how we interact with each other. By understanding these technologies, we can navigate the world in a more meaningful way and make a real difference. Education is what helps us make sense of the world and our place in it, and it's essential for creating a better future. It's not just about learning facts, but about learning how to think, how to solve problems, and how to work together to make things better. With the rise of AI and other technologies, education is more important than ever, as it helps us stay ahead of the curve and make the most of the opportunities that these technologies bring. By embracing education and all it has to offer, we can create a brighter, more innovative, and more compassionate world for everyone.

One of the most compelling illustrations of education's value comes from marginalized communities. Parents who themselves lacked access to schooling often prioritize education for their children. Their understanding may not be articulated in theoretical language, yet it reflects a profound awareness that education offers dignity, mobility, and

empowerment. For them, education is not confined to classrooms or textbooks; it is a means to read the world, to recognize opportunities, and to navigate unfamiliar terrains. Today, this navigation increasingly includes digital spaces shaped by algorithms and AI systems. Without access to digital literacy and technological awareness, such communities face a new and subtle form of exclusion-the digital divide-which risks reproducing existing inequalities in more complex ways.

As students go through school, they face different kinds of problems depending on their background. Students who are the first in their family to go to school often have a hard time figuring out what to do next. They don't have much guidance, and the job market is changing really fast because of technology. This makes it tough for them to know what skills they'll need in the future. On the other hand, students from wealthier families might have a different problem. Their schools can be too focused on numbers and rankings, which can make learning feel like a machine-like process. This approach ignores important qualities like creativity, thinking about what's right and wrong, being curious, and understanding emotions - all things that make us human and are still really important, even with AI taking over some jobs.

In this evolving landscape, the role of government becomes central in shaping an inclusive and future-ready education system. Public policy must not only ensure access to education but also address disparities in quality and opportunity. Investments in digital infrastructure, especially in rural and underserved regions, are essential to democratize access to knowledge. Initiatives such as the National Education Policy (NEP) 2020 in India signal an important shift toward holistic, multidisciplinary, and skill-oriented education, while also emphasizing the integration of technology into teaching and learning processes. However, technological integration must be guided by ethical considerations, ensuring that data privacy, algorithmic fairness, and equitable access remain at the forefront of educational reform.

The government has a big role to play in getting teachers ready for the changes in education. Teachers need to know their subject, but they also need to know how to use digital tools and new ways of teaching that use artificial intelligence. To do this, they need to keep learning and getting better, and their schools need to support them. Also, public schools should make sure that everyone can access learning platforms that are free and open, so people don't have to rely on companies that are just trying to make money from education. This way, education can stay something that belongs to everyone, not just something that people can buy and sell.

The philosophical insights of B. R. Ambedkar and Mahatma Gandhi remain deeply relevant in this context. Ambedkar envisioned education as a means of social transformation, enabling individuals to challenge structures of inequality and participate meaningfully in democratic life. In

the present era, this vision extends to technological empowerment, where citizens must not only consume digital content but also understand, question, and shape the technologies that influence their lives. Gandhi's philosophy of Nai Taleem, which emphasizes the integration of hand, heart, and mind, offers a powerful critique of narrowly utilitarian approaches to education. His idea of education as self-realization underscores the importance of aligning knowledge with ethical and social responsibility. In an age dominated by AI, such a perspective reminds us that technological advancement must remain anchored in human values.

Foundational Literacy and Numeracy (FLN) and Minimum Reading Proficiency (MRP) continue to form the bedrock of meaningful education, particularly for first-generation learners. These foundational skills enable individuals to access, interpret, and engage with information. Yet, in the digital age, literacy must be understood in broader terms. Digital literacy, media literacy, and an awareness of how algorithms curate and shape information are now essential components of being educated. Without these competencies, individuals risk becoming passive recipients of information, vulnerable to misinformation and manipulation, rather than active and critical participants in knowledge creation.

Education is a journey that lasts a lifetime and is always changing. It's not just about what we learn in school, but also about what we experience every day and what we discover online. We should think of education as a place where people can talk, think critically, and share different ideas. This way, education becomes a shared activity where we learn from each other, from our teachers, and from the world around us. It's a space where we question things, rather than just accepting them. By doing it this way, we can create a community that values knowledge, discussion, and diverse perspectives. We learn from books, but also from each other's experiences and from the world we live in. This approach to education helps us grow, not just as individuals, but as a society. It encourages us to think for ourselves, to explore, and to understand different points of view. In the end, education should be a dynamic and ongoing process that helps us navigate the world and make sense of it.

In this context, the relationship between education, technology, and democracy becomes particularly significant. An informed and educated citizenry is essential for the functioning of a democratic society. However, in an era where information is mediated by algorithms and digital platforms, the ability to critically evaluate information becomes as important as access to it. Education must therefore equip individuals with the tools to navigate this complex informational landscape, enabling them to distinguish between knowledge and misinformation, and to participate responsibly in public discourse.

Education is really important for bringing people together and keeping cultures alive. It helps people learn about their past, their language, and their customs, and it also gets them ready to think about the world in a bigger way. When there are a lot of different kinds of people in a society, education can be like a bridge that helps them understand and respect each other. And it's not just about staying the same - education also needs to be able to change and adapt to new things, like technology, so it can keep helping people navigate the world. This way, education can stay relevant and keep making a positive impact on people's lives. By doing so, it can help create a more harmonious and inclusive society, where people from different backgrounds can come together and learn from each other.

In the end, education is more than just about learning or getting a job - it's about building a strong and fair society. With technology changing so fast, education is even more important now. It needs to help people connect with each other and with the digital world, think critically and make good choices, and get ready for a world that's always changing. When a government puts money into education that's fair and looks to the future, it's helping to make sure the country develops in a way that's good for everyone and can keep its democratic values strong. Most importantly, education should stay focused on what makes us human, teaching people not just to keep up with new technology, but to use it in a way that's smart, responsible, and good for everyone.❑

शैक्षिक मंथन (मासिक)
प्रकाशन तिथि : 1 मई 2026
प्रेषण दिनांक : 7 मई 2026, सी.एस.ओ. गाँधीनगर, जयपुर

पंजीयन क्र. : आर.एन.आई. राजबिल/2008/26080
डाक पंजीयन क्र. : आई.आर./जयपुर सिटी/434/2024-26

राजस्थान सरकार

श्री नरेन्द्र मोदी
माननीय प्रधानमंत्री

श्री भजनलाल शर्मा
माननीय मुख्यमंत्री

प्रगति पथ पर बढ़ता राजस्थान

देश में प्रथम

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना
2.18 करोड़ पॉलिसियां

पीएम-कुसुम योजना
कम्पोनेन्ट- ए एवं सी

जनजाति कल्याण एवं सशक्तीकरण
धरती आबा जनभागीदारी अभियान में बेस्ट परफॉर्मिंग स्टेट

फार्मर रजिस्ट्री योजना
लाभार्थी ID निर्माण

स्वच्छता ही सेवा अभियान 2025
लक्षित इकाइयों का रूपांतरण

सहित 13 योजनाओं में देश में प्रथम

देश में द्वितीय

कृषि विभाग
प्रक्रियाओं का डिजिटलीकरण

पीएम विश्वकर्मा योजना
ऋण स्वीकृति एवं वितरण

पीएम कृषि सिंचाई योजना- "पर ड्रॉप - मोर क्रॉप"
1.31 लाख हेक्टेयर माइक्रो इरिगेशन स्थापना

राष्ट्रीय गोपाल रत्न पुरस्कार
श्रेष्ठ डेयरी कोऑपरेटिव सोसायटी
श्रेष्ठ कृत्रिम गर्भाधान तकनीशियन

पोषण माह 2025 गतिविधियों में

देश में तृतीय

पीएम - कुसुम योजना
कम्पोनेंट-B एवं C-FLS

जल संचय जनभागीदारी 1.0 अभियान
कार्य क्रियान्वयन के आधार पर

आयुष्मान भारत (PM-JAY)
क्लेम सेटलमेंट एवं हॉस्पिटल एम्पैनलमेंट

टीबी मुक्त ग्राम पंचायत
घोषित करने एवं 100 दिवसीय कैम्पेन

एक जिला एक उत्पाद कार्यक्रम
क्रियान्वयन श्रेणी

सहित 6 योजनाओं में देश में तृतीय

राजस्थान संवाद

प्रगति निरंतर - आंकड़ों की जुबानी

5 साल (2018-2023) बनाम 25 माह (2024 - मार्च, 2026)

	कौशल प्रशिक्षण (लाख)	फार्म पौण्ड (खेत तलाई)	ओडीएफ प्लस गाँव	निर्मित नवीन सड़कों की लम्बाई (किमी.)	सड़कों से जोड़े गए गाँव	नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं हेतु आवंटित भूमि (हेक्टेयर)	बिजली उत्पादन क्षमता में वृद्धि (मेगावाट)	बालिका प्रोत्साहन योजना में लाभान्वित	कुसुम घटक 'ए' में जारी एलओए
पहले	2.35	29,430	1,478	13,160	1,104	22,597	3,952	2,92,507	489
अब	3.41	35,368	41,037	16,864	1,717	98,894	8,261	3,14,530	2,911

	स्कूली विद्यार्थियों को टैबलेट / लेपटॉप वितरण	छात्राओं को स्कूटी वितरित	राजकीय पॉलिटेक्निक महाविद्यालयों की स्थापना	राजकीय महाविद्यालयों के भवन निर्माण	स्कूली विद्यार्थियों को साइकिल वितरण (लाख)	नवीन राजस्व ग्रामों का सृजन	सैटेलाइट अस्पताल की स्थापना	किसानों को तारबंदी पर दी राशि (करोड़)	कुसुम घटक 'सी' में जारी एलओए
पहले	986	21,136	5	57	10.36	1,517	10	113	57
अब	88,724	41,820	21	185	11.31	2,294	18	403	2,064

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, राजस्थान

कृपया अवितरित होने पर लौटावें :
प्रकाशकीय कार्यालय
शैक्षिक मंथन
82, पटेल कॉलोनी,
सरदार पटेल मार्ग, जयपुर - 302 001

प्रकाशक, मुद्रक - महेन्द्र कपूर, स्वत्वाधिकारी शैक्षिक मंथन संस्थान द्वारा प्रीमियर प्रिंटिंग प्रेस, प्लॉट नं. 12, रामनगर, सोडाला, जयपुर से मुद्रित।
सम्पादक - डॉ. शिवशरण कौशिक